ओ३म्

संस्कृतशिक्षक

प्रथम भाग

संस्कृत सीखने का सर्वोत्तम साधन

जिस में

वर्तमान नवीनप्रणाली के अनुसार संस्कृत-व्याकरण के गूढ़ नियमों को सरलभाषा द्वारा समझाया गया है तथा नीचे प्रत्येक विषय के पाणिनिकृत अष्टाध्यायी के आवश्यक सूत्र काशिका की वृत्तिसहित दिये गये हैं। साथ २ ही विद्यार्थियों की सुगमता के उद्देश्य से उदाहरण भी दिखलाये गये हैं॥

रचयिता

श्री पं० देवदत्त त्रिपाठी नैनीताल

प्रकाशक

रघुवीरशरण दुबलिश सम्पादक 'भास्कर' पत्र

मेरठ शहर

मिलने का पता-

मैनेजर भास्कर प्रेस मेरठ शहर

प्रथमवार १२००] संवत् १९७४ [मूल्य ॥=)

Printed & Published by

RAGHUVIR SHARAN DUBLIS

at the Bhaskar Press, Meerut City.

ओ३म्

समर्पणम्
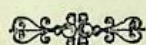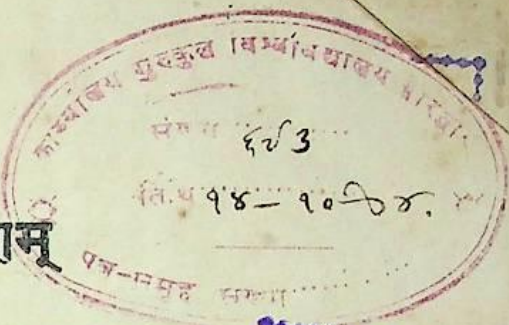
श्री ६ पूज्यपाद-पण्डितप्रवर-स्वर्गीयपितृ-
रमादत्तशर्म्म-चरण-सरोरुहेषु

श्रीमन् ! आप का संस्कृत एवम् भारतीयभाषा के प्रति अगाध प्रेम था। आपने हिन्दी भाषा के भाण्डार को भरने के लिये अनेक परमोपयोगी ग्रन्थों का निर्माण भी किया, जो आप के नाम को चिरस्थायी एवम् आप की विद्याप्रभा-साहित्यप्रेमादि सद्गुणों को अटल रखने के लिये पर्याप्त हैं; तथापि जिस प्रकार अनेक पुरुष अपने पितरों के स्मरणार्थ उन के नाम से धर्मशाला मन्दिर विद्यालयादि की स्थापना करते हैं उस ही प्रकार आप के स्मृत्यर्थ मेरी यह तुच्छ कृति है ॥

आप का पुत्र-
देवदत्त

ओ३म्

ग्रन्थकार का निवेदन

ऐश्वरी संस्कृतावाणी सर्व-कर्म-प्रसाधिनी।
सुबोधिनी च शास्त्राणां जिह्वाजाड्य-विनाशिनी

अधुना प्राचीन घटना एवम् पुराचीन साहित्य के अन्वेषक एवम् आर्य (हिन्दू) समुदाय की इच्छा संस्कृतभाषाज्ञान की ओर विशेष दृष्ट होती है। क्योंकि यह निर्विवादतया सर्वमान्य है कि पुराकाल में समस्त महीमण्डल की राष्ट्रभाषा एकमात्र संस्कृत भाषा ही थी। अतः तत्कालीन विद्वन्मण्डल ने इस संस्कृत भाषा को न्याय योग, सांख्य, वेदान्त, इतिहास, ज्योतिष, वैद्यक, नीति, विज्ञानादि विविध विषयों से समलंकृत सर्वांगसुन्दर बना डाला था; साहित्य के किसी भी अंग में किसी प्रकार की त्रुटि न रक्खी थी। कोई भी साहित्य का ऐसा विषय न था कि जिस पर संस्कृतभाषा के विद्वानों ने बहुविध भाव-मय श्रेष्ठतम ग्रन्थों की रचना न की हो। अतएव प्राचीन घटनाओं के अन्वेषणार्थ एवम् पुराकालीन विशेषताओं के बोधार्थ संस्कृतभाषा के ज्ञान की अत्यावश्यकता है। इसके अतिरिक्त भारतवर्षान्तर्गत जितने शैव, शाक्त, वैष्णव, गाणपत्य आदि आदि शिखाधारी सम्प्रदाय वा पन्थ हैं उन सब के धर्म-ग्रन्थ संस्कृतभाषा में ही हैं। अतएव उन २ प्रत्येक

साम्प्रदायिकों को अपने २ धार्मिक सिद्धान्तों वा नियमों के पूर्णतया जानने के लिये भी संस्कृत ज्ञान की अत्यावश्यकता है, क्योंकि विना ऐसा किये उन को अपने सम्प्रदाय के समस्त सिद्धान्तों वा नियमों का पूर्णतया बोध नहीं हो सकता । उक्त २ प्रधान हेतुओं से प्रत्येक भारतीय को संस्कृतभाषा का कुछ न कुछ ज्ञान प्राप्त करना अत्यावश्यक है । परन्तु आधुनिक शिक्षाविधि के समयानुकूल न होने से अधिककाल पर्यन्त कठिन श्रम करने पर भी बहुत ही कम बोध होता है । इस पर भी संस्कृत व्याकरण का अध्ययन करना तो अतीव कठिन है । इस बात को समस्त संसार के विद्वान् निर्विवादतया स्वीकृत करते हैं कि किसी भाषा का ज्ञान, उस भाषा के व्याकरणज्ञान के विना, उस भाषा को न जानने के ही समान है । किसी कवि ने कहा है कि:—

शब्दशास्त्रमनधीत्य यः पुमान् वक्तुमिच्छति वचः सभान्तरे ।
हस्तिनं कमलनालतन्तुना बद्धुमिच्छति मदोत्कटं वने ॥
यद्यपि बहुनाधीषे तथापि पठ पुत्र व्याकरणम् ।
स्वजनः श्वजनो सकलं शकलं सकृच्छकृत् ॥

कवि का आशय है कि जो पुरुष विना शब्द-शास्त्र के पढ़े सभा में कुछ बोलना चाहता है वह मानो मत्त हाथी को कमलतन्तु से विकट वन में बांधना चाहता है । फिर कवि अपने पुत्र से कहता है कि " हे पुत्र ! तू यदि अधिक नहीं भी पढ़ता है तो शब्दशास्त्र को तो अवश्यमेव पढ़ । देख,

'स्वजन' शब्द का उच्चारण करते समय "श्वजन" न हो जाय एवम् सकृत् के स्थान में शकृत्, सकल के स्थान में शकल न बोला जावे।" भावार्थ यह है कि स्वजन शब्द का अर्थ अपना आदमी है, परन्तु इस ही स्वजन शब्द के दन्त्यसकार के स्थान में तालव्य शकार लिख वा बोल दिया जाय तो उक्त शब्द का अर्थ कुत्ते का आदमी हो जाता है। एवम् सकृत्=१ वार, शकृत्=विष्टा; सकल=समूचा, शकल=टुकड़ा। इन शब्दों में सकार और शकार के भेदमात्र से ही अर्थ में आन्तर्य होजाता है॥

हम पहिले ही लिख चुके हैं कि अधुना संस्कृताध्ययन उस में भी व्याकरण का बोध करना अतीव क्लिष्ट है। जब चिरकाल पर्यन्त कठिन श्रम किया जाय तब कहीं कुछ बोध होता है। इसी हेतु से प्रायः आधुनिक संस्कृत के विद्वान् व्याकरणशास्त्र के अतिरिक्त अन्य ज्योतिष, भूगोल, इतिहास, विज्ञानादि विषयों पर विशेषज्ञ नहीं दीखते। उन की ऐसी दशा देख संस्कृत का प्रचार दिनोंदिन कम होता जारहा है। इन्हीं विचारों से हमारे मन ने यह संकल्प किया कि कोई ऐसा ग्रन्थ लिखा जाय कि जिस के द्वारा संस्कृतभाषा का बोध सरलतया हो सके। उक्त प्रणानुसार ही यह पुस्तक पाठकों के सन्मुख उपस्थित की जाती है। यों तो संसार में ऐसी वस्तु कौनसी कि जिस में गुण-दोष न हों, तथापि हम में

जहां तक शक्ति थी देशकालानुसार इस पुस्तक को सरल एवम् उपयोगी बनाने में त्रुटि नहीं रक्खी है॥

अन्त में पाठकों को इस हर्षसमाचार से सूचित करते हैं कि ग्रन्थकार के निवेदन पर इस पुस्तक का शोधनभार अंग्रेजी तथा देववाणी के पारंगत संस्कृत-साहित्य के महार्णव लब्धप्रतिष्ठ विद्वान् प्राड्विवेक श्रीमान् पण्डित श्रीकृष्ण जोशी B. A. L. L. B. महोदय ने सहर्ष स्वीकृत किया एवम् सम्यक्तया ग्रन्थ का अवलोकन तथा अशुद्धिनिष्कासन करते हुए उक्त विद्वान् महोदय ने आरम्भ में एक छोटी सी भूमिका भी लिखी है। इस से लेखक को पूर्ण विश्वास है कि अब यह ग्रन्थ प्रत्येक संस्कृत विद्यालयों एवम् गुरुकुल, ऋषिकुलादि सब संस्थाओं के उपयोगी होगा। क्योंकि प्राचीन प्रणालीसे अध्ययनाध्यापनेच्छुकगण इस पुस्तक के निम्नभाग में लिखे सूत्रों द्वारा अपनी इच्छा की पूर्त्ति कर सकते हैं, एवम् नवीनशिक्षापद्धति के प्रेमी सज्जन हिन्दीभाषा में लिखे नियमों द्वारा अपने अभीष्ट को पा सकते हैं। इस के अतिरिक्त इस ग्रन्थ के द्वारा, विना गुरु, घर में ही स्वयं पढ़ने वालों का भी बहुत कुछ उपकार होना सम्भव है। यदि पाठकों ने इसे अपनाया तो इस ग्रन्थ के अन्य भाग भी शीघ्र प्रस्तुत होंगे॥

निवेदक—देवदत्त त्रिपाठी नैनीताल

भूमिका

संस्कृतभाषा की उपादेयता तो निर्विवाद सिद्ध ही है। संस्कृतभाषा जो प्राचीन आर्यों में भूमण्डल-व्यापिनी राष्ट्रभाषा थी उस में अब भी सार्वजनिक भाषा होने की योग्यता है। कम से कम सनातनधर्म की रक्षा के निमित्त और प्राचीन गौरव की रक्षा के निमित्त तो यह गीर्वाण वाणी अत्यन्त ही आवश्यक है। आधुनिक भाषाओं की यह माता है। संस्कृत के धातु प्रत्ययों को ही आधुनिक भाषाओं में प्रयोग करने के निमित्त नवीन २ शब्दों की रचना हो सकती है। इस लिये मनुष्य को विशेषकर प्रत्येक भारतवासी को संस्कृत जानना ही चाहिये ॥

गीर्वाण वाणी के पवित्र स्रोत से शुद्ध विद्यामृत जो श्री पाणिनि मुनि के सूत्ररूपी गंगोत्तरी तथा श्री पतञ्जलि मुनि के महाभाष्य रूपी गंगाद्वार से मिल सकता है वह अन्य स्थलों में कहां? तथापि ग्रन्थकार श्री० पं० देवदत्त त्रिपाठी जी ने शिल्पकार (Engineer) बन कर उस पवित्र विद्यामृत के स्रोत की उन्नत गिरिशिखर–दुर्गम उपत्यकाओं में प्रवेशकर शुद्ध उद्गमस्थान (Fountain–head) से सर्वसाधारण

के हितार्थ इस छोटी पत्रिका रूपी कुल्या के द्वारा उसी पवित्र व्याकरणामृत का भारतवर्ष में घर घर पहुंचाने का विचार किया है । ग्रन्थ छोटा होने पर भी अभ्याससहित व्याकरणशिक्षा (Practical teaching) के उपयोगी है । इसमें जो बात सिखाई है उसी का तुरन्त प्रयोग भी वाक्यरचना उदाहरण अनुवाद इत्यादि द्वारा बताकर व्याकरण को पाक्षिकी विद्या-श्रेणी से मुक्त कर दिया है ॥

आशा है कि इस ग्रन्थ के समस्तभाग शीघ्र ही प्रकाशित हो जांयगे । यदि पाठक इस ग्रन्थ की सहायता से कुछ संस्कृतवाणी को सीख सकेंगे तो ग्रन्थकर्ता तथा उस के सहायकगण अपने २ को कृत-कृत्य समझेंगे ॥ श्रीरस्तु ॥

श्रीकृष्ण जोशी बी. ए. एल. एल. बी.

वकील हाईकोर्ट

नैनीताल
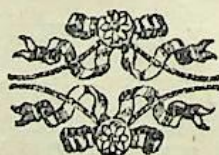
उपयोगिसूत्रसूची ।

हमने इस ग्रन्थ में जो प्रक्रम दिये हैं वे भिन्न २ अष्टाध्यायी आदि के सूत्रानुसार हैं, उन प्रक्रमों के आधार सूत्रों को साथ में नीचे लिख दिया है। परन्तु जो इस ग्रन्थ को सूत्रानुसार पढ़ना चाहें, उन्हें प्रथम निम्न-लिखित सूत्र भी कण्ठस्थ कर लेने चाहियें। बिना इन सूत्रों को कण्ठस्थ किये अन्य ग्रन्थस्थ सूत्रों का अर्थ लगाना वा उपयोग करना नहीं हो सकता :—

अइउण् ॥ १ ॥ ऋलृक् ॥ २ ॥ एओङ् ॥ ३ ॥ ऐ-औच् ॥ ४ ॥ हयवरट् ॥ ५ ॥ लण् ॥ ६ ॥ ञम-ङणनम् ॥ ७ ॥ झभञ् ॥ ८ ॥ घढधष् ॥ ९ ॥ जबगडदश् ॥ १० ॥ खफछठथचटतव् ॥ ११ ॥ कपय् ॥ १२ ॥ शषसर् ॥ १३ ॥ हल् ॥ १४ ॥ इतिप्रत्या-हारसूत्राणि अणादिसंज्ञार्थानि । एषामन्त्या इतः हकारादिषु अकार उच्चारणार्थः लण्मध्येत्वित्-संज्ञकः ॥

भावार्थ—उक्त "अइउण्" आदि १४ सूत्र अण् आदि प्रत्याहार बनाने के लिये हैं । व्याकरणशास्त्र में प्रत्याहार उस को कहते हैं कि जिस में केवल दो अक्षरों के कहने से बहुत से अक्षरों का बोध होजाय, जैसे "अण्" इतना कहने से अ इ उ इन तीन अक्षरों का बोध होजाता है । इन प्रत्याहारों को बनाने वा

उपयोग करने की रीति अगले सूत्र में बतलावेंगे। इन १४ सूत्रों में से प्रत्येक सूत्र का अन्तिम अक्षर इत्संज्ञक है (उस इत्संज्ञक अक्षर के नीचे इस प्रकार का चिह्न (्) कर दिया गया है)। पांचवें सूत्र से चौदहवें सूत्र तक जितने अक्षर हैं सब व्यञ्जन हैं, अतः इन सब अक्षरों के साथ जो अकार का भी उच्चारण होता है वह केवल बोलने के निमित्त है (क्योंकि व्यञ्जनवर्ण बिना स्वर की सहायता से नहीं बोले जा सकते। देखो इस ग्रन्थ का दूसरा प्रक्रम); परन्तु "लण्" सूत्र में ल के अन्तर्गत का अकार प्रत्याहार बनाने के लिये है॥

आदिरन्त्येन सहेता १। १। ७१॥

अन्त्येनेता सहित आदिर्मध्यगानां वर्णानां स्वस्य च ग्राहको भवति॥

भावार्थ—प्रत्याहार बनाने की रीति यह है कि जो प्रत्याहार बनाना हो प्रथम जिस अक्षर से प्रत्याहार बनाना है उस को लो, फिर अन्तिम इत्संज्ञक अक्षर का ग्रहण करो, प्रत्याहार बन जायगा। उस प्रत्याहार का आदिवर्ण अन्त्य इत् के साथ मिलकर मध्यस्थ और स्वीय स्वरूप का भी ग्राहक होता है। यथा अण्=अ इ उ। अक्=अ इ उ ऋ, ऌ इत्यादि। यहां पर इस बात का भी ध्यान रहे कि प्रत्याहार बनाने में यदि मध्य में कोई इत्संज्ञक अक्षर उपस्थित हों तो उन का लोप हो जाता है, क्योंकि इत्संज्ञक अक्षर

की गणना नहीं होती। और यों तो प्रत्याहार बहुत से हो सकते हैं; परन्तु व्याकरणशास्त्र में उक्त सूत्रों से बने हुए केवल ४२ प्रत्याहारों का ही प्रयोग हुआ है, जिनको हम यहां पर लिखते हैं॥

प्रत्येक प्रत्याहार का वर्णज्ञान।

१ अण्=अ इ उ। २ अक्=अ इ उ ऋ लृ। ३ अच्=अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ। ४ अट्=अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ ह य व र। ५ अण्=अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ ह य व र ल। ६ अम्=अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ ह य व र ल ञ म ङ ण न। ७ अश्=अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ ह य व र ल ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द। ८ अल्=अ इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ ह य व र ल ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स ह। ९ इक्=इ उ ऋ लृ। १० इच्=इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ। ११ इण्=इ उ ऋ लृ ए ओ ऐ औ ह य व र ल। १२ उक्=उ ऋ लृ। १३ एङ्=ए ओ। १४ एच्=ए ओ ऐ औ। १५ ऐच्=ऐ औ। १६ हश्=ह य व र ल ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द। १७ हल्=ह य व र ल ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स ह। १८ यण्=य व र ल। १९ यम्=य व र ल ञ म ङ ण न। [२०] यञ्=य व र ल ञ म ङ ण न झ भ। २१ यय्=य व र ल

ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प। २२ यर्=य व र ल ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स। २३ वश्=व र ल ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द। २४ वल्=व र ल ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स ह। २५ रल्=र ल ञ म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स ह। २६ मय्=म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प। २७ ङम्=ङ ण न। २८ झष्=झ भ घ ढ ध। २९ झश्=झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द। ३० झय्=झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प। ३१ झर्=झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स। ३२ झल्=झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स ह। ३३ भष्=भ घ ढ ध। ३४ जश्=ज ब ग ड द। ३५ बश्= ब ग ड द। ३६ खय्=ख फ छ ठ थ च ट त क प। ३७ खर्=ख फ छ ठ थ च ट त क प श ष स। ३८ छव्=छ ठ थ च ट त। ३९ चय्=च ट त क प। ४० चर्=च ट त क प श ष स। ४१ शर्=श ष स। ४२ शल्=श ष स ह॥

ये दो प्रत्याहार भी प्रयुक्त हुए हैं। ४३ ञम्=ञ म ङ ण न। ४४ भष्=भ घ ढ ध ज ब ग ड द॥

धातुसूत्रगणोणादिवाक्यलिङ्गानुशासनम् ।
आगमाः प्रत्ययादेशाः उपदेशाः प्रकीर्तिताः ॥

भू आदि धातु अइउणादि १४ सूत्र, गण, उणादि, वाक्य, लिंग, अनुशासन, आगम, तिप् आदि प्रत्यय और आदेश को उपदेश कहते हैं ॥

उपदेशेऽजनुनासिक इत् १।३।२॥

उपदेशेऽनुनासिकोऽच् "इत्" संज्ञको भवति।

उपदेश में जो अनुनासिक अच् (नासिका से बोलाजाने वाला स्वर) हो वह इत्संज्ञक होता है। यथा—२८ वें प्रक्रम में के प्रत्ययों में से "सु" प्रत्यय का उकार इत् संज्ञक है ॥

हलन्त्यम् ।१।३।३॥

उपदेशेऽन्त्यं हल् इत्संज्ञको भवति ॥

उपदेश में अन्तिम हल् इत् संज्ञक होता है। यथा—२२ वें प्रक्रम में कहे "मिप्, सिप्" प्रत्ययों के पकार की इत् संज्ञा होती है। अइउण् आदि सूत्रों में ण् क् ङ् च् आदि इत्संज्ञक हैं ॥

आदिर्ञिटुडवः १।३।५॥

धातोराद्याःञिटुडवः इतोभवन्ति।

धातु के आदि में ञि, टु, डु इत्संज्ञक होते हैं। यथा—"डुपचष् पाके" इस धातु में "डु" की इत् संज्ञा है ॥

षः प्रत्ययस्य १ । ३ । ६ ॥

प्रत्ययस्यादिः " ष " इत्संज्ञको भवति ॥

प्रत्यय के आदि का मूर्धन्य षकार इत्संज्ञक होता है ॥

चुटू १ । ३ । ७ ॥

प्रत्ययाद्यौ चवर्गटवर्गौ इतौ भवतः ॥

प्रत्यय के आदि का चवर्ग टवर्ग इत्संज्ञक होते हैं ॥

यथा—२८ वें प्रक्रम में कहे " जस् " प्रत्यय के जकार की इत्संज्ञा है ।

लशक्वतद्धिते १ । ३ । ८ ॥

तद्धितवर्जप्रत्ययाद्याः ल श कवर्गा इतोभवन्ति ॥

तद्धित को छोड़ कर प्रत्यय के आदि के ल, श और कवर्ग इत् संज्ञक होते हैं । (तद्धित का वर्णन इस भाग में नहीं किया है, अन्य भागों में किया जायगा)

यथा-२८ वें प्रक्रम के "ङे, ङसि, ङस्" प्रत्ययों के ङकार की इत् संज्ञा है ॥

तस्य लोपः १ । ३ । ९ ॥

यस्येत्संज्ञा विहिता तस्य लोपो भवति ॥

उपरोक्त सूत्रों से जिस अक्षर की "इत्" संज्ञा की गई है उस अक्षर का लोप हो जाता है ॥

यथा-" ङे " प्रत्यय के ङकार की इत्संज्ञा " लशक्वतद्धिते " सूत्र से होकर इस " तस्य लोपः " सूत्र से ङकार का लोप होजाता है तब केवल " ए " रह जाता है ॥

अदर्शनं लोपः १। १। ६०॥

समुपस्थितस्यादर्शनं लोपसंज्ञकं भवति ॥

जो विद्यमान (मौजूद) हो उसके छिपजाने वा न दिखाई देने को लोप कहते हैं ॥

न विभक्तौ तुस्माः १। ३। ४॥

विभक्तिस्था तवर्गसकारमकारा इतो न भवन्ति।

विभक्ति सम्बन्धी तवर्ग, सकार, मकार इत्-संज्ञक नहीं होते ॥

इकोगुणवृद्धी १। १। ३॥

गुणवृद्धिशब्दाभ्यां यत्र गुणवृद्धी विधीयेते (क्रियेते) तत्र इक इति षष्ठ्यन्तं पदमुपतिष्ठते अथवा गुणवृद्धी इकेवस्थाने भवेताम् ॥

जहां गुण वा वृद्धि शब्द के द्वारा गुण वा वृद्धि का विधान किया जाय वहां "इक्" यह षष्ठ्यन्त्य पद उपस्थित होता है अथवा गुण वा वृद्धि इक् के ही स्थान में होते हैं ॥

सुडनपुंसकस्य १। १। ४३॥

सु औ जस् अम् औट् इमे प्रत्ययानि सर्वनामस्थानसंज्ञकानि भवन्ति नपुंसकलिङ्गंवर्जयित्वा।

सु, औ, जस्, अम्, औट् इन पांच प्रत्ययों की सर्वनामस्थान संज्ञा है। यह सर्वनामस्थान संज्ञा नपुंसक लिङ्ग को छोड़ के अन्य लिंगों में होती है।

आद्यन्तौ टकितौ १।१।४६॥

टित्कितौ यस्योक्तौ तस्य क्रमादाद्यन्तावयवौ भवेताम्॥

जिस आगम सम्बन्धी प्रत्यय का टकार अथवा ककार इत्संज्ञक है उसका आगम क्रम से आदि और अन्त में हो अर्थात् टित् का आगम आदि में और कित् का अन्त में हो।

स्थानेऽन्तरतमः १।१।५०॥

प्रसंगेसति सदृशतम आदेशो भवति॥

जहां किसी आदेश की प्राप्ति हो तो उस में जो बाह्याभ्यन्तरप्रयत्नादि के सम्बन्ध से अत्यन्त सदृश हो वही आदेश होता है॥

अलोऽन्त्यस्य १।१।५२॥

षष्ठीनिर्दिष्टान्तस्याल आदेशोभवति।

षष्ठी के द्वारा निर्देश किया हुआ आदेश अन्तिमाक्षर के ही स्थान में होता है॥

आदेः परस्य १।१।५४॥

परस्य यत्कार्यं विहितं तत् तस्यादेर्ज्ञेयम्।

पर को जो कार्य का विधान किया जाय, वह उस के आदि में जानना चाहिए॥

तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य १।१।६६॥

सप्तमीनिर्देशेन क्रियमाणं कार्यमक्षरान्तरेण रहितस्य पूर्वस्य बोध्यम्॥

सप्तमी के द्वारा जो किया जाने योग्य कार्य हो वह वर्णान्तर से रहित पूर्व को हो॥

प्रत्ययस्य लुक्श्लुलुपः १।१।६१॥

प्रत्ययस्यादर्शनस्यलुक्,श्लुलुपइत्येताःसंज्ञा भवंति

प्रत्यय के लोप की लुक्, श्लु और लुप्, ये तीन संज्ञाएं होती हैं॥

अचोऽन्त्यादि टि १।१।६४॥

अचां मध्ये योऽन्त्यः स आदिर्यस्य तत् टिसंज्ञकं भवति।

अच् प्रत्याहार के वर्णों में से जो अन्तिम अच् है वह जिस की आदि में हो उस के साथ उस अन्त्य अक्षर की "टि" संज्ञा होती है॥

तस्मादित्युत्तरस्य १।१।६७॥

पञ्चमीनिर्देशेन विधीयमानं कार्यमक्षरान्तरेण रहितस्य परस्य ज्ञेयम्॥

पञ्चमी के द्वारा निर्दिष्ट जो कार्य हो वह वर्णान्तर से रहित पर के लिये जानना चाहिये॥

तपरस्तत्कालस्य १।१।७०॥

तपरो यस्मात् स च तात्परश्च समकालस्यैव संज्ञको भवति ॥

जिस से तकार परे हो अथवा जो तकार से परे हो वह अपने ही काल का ग्राहक होता है ॥

उच्चैरुदात्तः १।२।२९ ॥

उच्चैरुपलभ्यमानो योऽच् स उदात्तसंज्ञकः भवति

जो स्वर ऊंची आवाज़ से बोला जाय उसे 'उदात्त' कहते हैं ॥

नीचैरनुदात्तः १।२।३० ॥

नीचैरुपलभ्यमानो योऽच् स अनुदात्तसंज्ञको भवति

जो स्वर नीची आवाज़ से बोला जाय उस को 'अनुदात्त' कहते हैं ॥

समाहारः स्वरितः १।२।३१ ॥

उदात्तानुदात्तत्वे वर्णधर्मौ यस्मिन्समाह्रियेते स अनुदात्तसंज्ञको भवति

जो मध्यम स्वर से बोला जाय अर्थात् जिस में उदात्त अनुदात्त इन दोनों के वर्णधर्म का समावेश हो उस को स्वरित कहते हैं।

तस्यादित उदात्तमर्धह्रस्वम् १।२।३२ ॥

तस्य स्वरितस्यादावर्धह्रस्वमुदात्तं भवति परिशिष्टं त्वनुदात्तम् ॥

उस स्वरित के ह्रस्व रूप का पूर्वार्ध उदात्त माना जाता है, शेष भाग को अनुदात्त मानते हैं ॥

विप्रतिषेधे परं कार्यम् १ । ४ । २ ॥

तुल्यबलविरोधे परं कार्यं करणीयम् ॥

विप्रतिषेध अर्थात् तुल्यबलविरोध में पर को कार्य करणीय है ॥

धात्वादेः षः सः ६ । १ । ६४ ॥

धातोरादेः षस्य सादेशो भवति ॥

धातु के आदि में मूर्धन्य षकार हो तो उस के स्थान में दन्त्य सकार हो जाता है यथा षह् धातु जो 'सहने' के अर्थ में है उस के स्थान में सह् हो जाता है ॥

णो नः ६ । १ । ६५ ॥

धातोरादेः णो नः भवति ॥

यदि धातु के आदि में णकार हो तो उस के स्थान में नकार हो जाता है । यथा—णी धातु जो 'ले जाने' के अर्थ में है उस के स्थान में 'नी' हो जाता है ॥

पूर्वत्रासिद्धम् ८ । २ । १ ॥

सपादसप्ताध्यायीं प्रति त्रिपाद्यसिद्धा त्रिपाद्यामपि पूर्वं प्रति परं शास्त्रमसिद्धं ज्ञेयम् ॥

पाणिनि मुनि कृत व्याकरण में ८ अध्याय हैं अतः उस का नाम अष्टाध्यायी है । प्रत्येक अध्याय

में ४ पाद हैं। यह सूत्र ८ अध्याय २ पाद का पहिला ही सूत्र है, इस का अधिकार यहां से ग्रन्थ समाप्ति पर्यन्त जानना चाहिये। तिस में पूर्व के ७॥। अध्याय के समक्ष आगे के तीन पाद और इन तीन पादों में भी पूर्व के प्रति पर को कार्य असिद्ध समझा जावे॥

॥ इति ॥

ओ३म्

अथ संस्कृतशिक्षकः।

स्वर

अ आ इ ई उ ऊ ऋ
ॠ ऌ ए ऐ ओ औ ॥

व्यञ्जन

कवर्ग–क ख ग घ ङ
चवर्ग–च छ ज झ ञ
टवर्ग–ट ठ ड ढ ण
तवर्ग–त थ द ध न
पवर्ग–प फ ब भ म
अन्तस्थ–य र ल व
ऊष्म–श ष स ह
अनुस्वार=ं, ँ विसर्ग=ः, ᳵ।

१–विना किसी अन्य वर्ण की सहायता से ही जो अक्षर बोले जा सकते हैं उन को स्वर कहते हैं। यथा–अ, इ, ए इत्यादि ॥

१–स्वयं राजन्त इति स्वराः ॥

सूचना—स्वरों के निम्न लिखित ४ विभाग हो सकते हैं। इन को पाठकों को विशेषतः स्मरण रखना उचित है:—

मूलस्वर—अ इ उ

दीर्घस्वर-आ ई ऊ

संयुक्त स्वर—ए=अ+इ, अ+ई, आ+इ, आ+ई
ऐ=अ+ए, आ+ए, अ+ऐ, आ+ऐ
ओ=अ+उ, अ+ऊ, आ+उ, आ+ऊ
औ=अ+ओ, आ+ओ, अ+औ, आ+औ

पारिभाषिक स्वर—ऋ, लृ

पारिभाषिक दीर्घस्वर—ॠ

२—जिन अक्षरों के उच्चारण में स्वरों की सहायता पूर्णतः आवश्यक होती है उनको व्यञ्जन कहते हैं। यथा—क्, प्, च्, ट्, इत्यादि॥

३—मुख के जिस अवयव से जिस अक्षर का उच्चारण होता है वह उस अक्षर का स्थान कहलाता है वह इस प्रकार है। अ, आ, कवर्ग, हकार और अनुस्वार तथा विसर्ग का कण्ठ। इ, ई, चवर्ग य और श का तालु। ऋ ॠ टवर्ग र और ष का मूर्धा। लृ

२—स्वराधीनन्तु व्यञ्जनम्। अन्वक् भवति व्यञ्जनम्॥

३—अकुहविसर्जनीयानां कण्ठः, कण्ठनासिक्यमनुस्वारमेके। इचुयशानां तालुः। ऋटुरषाणां मूर्धा। लृतुलसानां दन्ताः। उपूपध्मानीयानामोष्ठौ। वकारस्य दन्तोष्ठम्।

तवर्ग, ल और स का दन्त। उ, ऊ और पवर्ग का ओष्ठ। व का दन्त और ओष्ठ। ए, ऐ इन दो अक्षरों का कण्ठ और तालु। ओ, औ इन दो अक्षरों का कण्ठ और ओष्ठ। अनुस्वार और वर्गों के पञ्चमाक्षरों का नासिका स्थान भी है, वर्गों के पहिले तीसरे पांचवें और अन्तस्थ अक्षर अल्पप्राण कहाते हैं। शेष व्यञ्जनों को महाप्राण कहते हैं। तथा वर्गों के प्रथम व द्वितीय अक्षर, श ष स और विसर्ग को अघोष कहते हैं, अन्य सब घोष हैं॥

४—अनुस्वार=ँ स्वर के ऊपर और विसर्ग=: स्वर के आगे लिखने की शैली प्रचलित है और इन का किसी अन्य स्वर के साथ योग हुवे विना उच्चारण न हो सकने के कारण इन की अयोगवाह संज्ञा है॥

५—अ, ए, ओ इन तीनों अक्षरों की गुण संज्ञा है। आ, ऐ, औ, इन तीनों की वृद्धि संज्ञा है॥

एदैतोः कण्ठतालु। ओदौतोः कण्ठोष्ठम्। नासिकानुस्वारस्य। ञमङणनानां नासिका च। वर्गाणां प्रथमतृतीयपञ्चमाः यणश्चाल्पप्राणाः। इतरे महाप्राणाः। वर्गाणां प्रथमद्वितीयाः शषसविसर्जनीयाः अघोषा इतरेघोषवन्तः॥

४—अनुस्वारविसर्गौ इत्यचः परौ अयोगवाहसंज्ञकौ भवतः॥

५—अदेङ् गुणः १। १। २ अ, ए, ओ इत्यक्षराणि गुणसंज्ञकानि भवन्ति॥ वृद्धिरादैच् १। १। १। आ, ऐ, औ इत्यक्षराणि वृद्धिसंज्ञकानि भवन्ति॥

६–स्वरोंके मुख्य तीन भेद हैं, ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत। जिस के उच्चारण में एक मात्रा काल लगे उसे ह्रस्व, जिस के उच्चारण में दो मात्रा काल लगे उस को दीर्घ, और जिस के उच्चारण में तीन मात्रा काल लगे उस को प्लुत कहते हैं। व्यञ्जन अर्धमात्रिक माने जाते हैं ॥

यथा ए ३ " राम " शब्द के अन्तर्गत मकार में जो अकार है वह ह्रस्व है, और "रा" के अन्तर्गत जो " आ " है वह दीर्घ स्वर है, और जो राम को पुकारने या चिताने को "ए" का प्रयोग किया गया है वह प्लुत है। प्लुत अक्षर के आगे तीन का अंक लिखने की शैली प्रचलित है ॥

७—ह्रस्व को लघु, दीर्घ को गुरु तथा जिस ह्रस्व के परे संयोग (संयुक्ताक्षर) हो उस को भी गुरु कहते हैं ॥

६–एकमात्रो भवेद्ध्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते।
त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनं चार्धमात्रकम् ॥

७–ह्रस्वं लघु १।४।१० ह्रस्वमक्षरं लघुसंज्ञकं भवति। संयोगे गुरु १।४।११ संयोगे परे ह्रस्वमक्षरं गुरुसंज्ञकं भवति। दीर्घञ्च १।४।१२ दीर्घमक्षरं गुरुसंज्ञकं भवति ॥

८—जिन व्यञ्जनों के अन्तर्गत स्वरों का व्यवधान न हो उन की संयोग (संयुक्ताक्षर) संज्ञा है यथा—क्+व=क्व। ख्+य=ख्य। क्+ष=(क्ष) क्ष, क्ष। त+र=त्र, त्र। ज्+ञ=(ज्ञ) ज्ञ इत्यादि॥

९—वर्णों की अतिशय सन्निधि को संहिता अथवा सन्धि कहते हैं। यह एक पद में, धातु और उपसर्ग के योग में और समास में सर्वदा करनी पड़ती है। वाक्य में तो सन्धि करना न करना प्रयोक्ता की इच्छा पर निर्भर है; चाहे वह करे वा न करे॥

१०—जिन २ अक्षरों का मौखिक स्थान और प्रयत्न समान हो वे २ अक्षर सवर्णसंज्ञक कहलाते हैं॥

११—नाममात्र को अर्थात् जो वस्तुतः कुछ अस्तित्व रखती हो उसे संज्ञा कहते हैं। इस का सम्बन्ध लिंग, वचन और कारक से होता है॥

८—हलोऽनन्तराः संयोगः १।१।७ अज्भिरव्यवहिता हलः संयोगसंज्ञकाः भवन्ति॥

९—परः सन्निकर्षः संहिता १।४।१०९ वर्णानामतिशयितः सन्निधिः संहितासंज्ञः भवति॥

नित्या संहितैकपदे नित्याधातूपसर्गयोः।
नित्या समासे वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते॥

१०—तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम् १।१।९ ताल्वादिस्थानमाभ्यन्तरप्रयत्नश्चैतद्द्वयं यस्य येन तुल्यं तौ मिथः सवर्णसंज्ञकौ भवतः। ऋलृवर्णयोर्मिथः सावर्ण्यं वाच्यम्॥

११—सत्वप्रधानानि नामानि (निरुक्ते)॥

१२—लिङ्ग तीन हैं पुल्लिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग और नपुंसक लिंग । सामान्यतः पुरुष के लिये पुल्लिंग, स्त्री के लिये स्त्रीलिंग और दोनों से विलक्षण वस्तु के लिये नपुंसक लिंग का प्रयोग होता है । यहां यह भी ध्यान रहे कि संस्कृतभाषा में प्रायः सब शब्द नियत-लिंग हैं जिनका विशेष परिचय लिंगानुशासन से होगा, जो इस ग्रन्थ में उचित स्थल पर दर्शाया जायगा; और यह लिंग केवल संज्ञा में ही होते हैं, क्रिया में नहीं होते । परन्तु हिन्दी भाषा में क्रिया और संज्ञा इन दोनों में लिंगों का प्रयोग होता है ॥

१३—वचन भी तीन हैं । एकवचन, द्विवचन और बहुवचन । जिस से एक व्यक्ति या पदार्थ का बोध हो उस को एकवचन कहते हैं । जिस से दो का बोध हो वह द्विवचन है और जिस से दो से अधिक तीन चार पांच आदि का बोध हो वह बहुवचन कहलाता है । इन वचनों का प्रयोग संज्ञा और क्रिया इन दोनों में होता है और कतिपय शब्द नियत-वचन हैं ॥

१२—स्तनकेशवती स्त्री स्याल्लोमशः पुरुषः स्मृतः ।
उभयोरन्तरं यच्च तदभावे नपुंसकम् ॥

१३—द्व्येकयोर्द्विवचनैकवचने १ । ४ । २२ द्वित्वविवक्षायां द्विवचनं एकत्वविवक्षायां एकवचनं भवति । बहुषु बहुवचनम् १ । ४ । २१ बहुत्वविवक्षायां बहुवचनं भवति ॥

१४—किसी प्रकार की चेष्टा या इच्छा किंवा व्यापार को अथवा धातुओं के अर्थ को "क्रिया" कहते हैं। यह तीनों लिंगों में समान रूप से प्रयुक्त होती है तथा इस का सम्बन्ध काल और पुरुष से भी होता है। लिंग इस में नहीं होते॥

१५ केवल क्रिया में ही तीन पुरुष होते हैं (१) प्रथम वा अन्य पुरुष (२) मध्यम पुरुष और (३) उत्तम पुरुष। जहां "तुम वा आप" शब्द का प्रयोग गुप्त अथवा प्रकट रीति से करना उद्दिष्ट हो वह मध्यम पुरुष कहलाता है। जिस क्रिया के द्वारा 'मैं वा हम' शब्द का प्रयोग इष्ट हो वह उत्तम पुरुष कहाता है अन्यत्र अर्थात् जिस के विषय में बात हो वह प्रथम वा अन्यपुरुष कहलाता है॥

१४—का पुनः क्रिया? ईहा! का पुनरीहा? चेष्टा! का पुनश्चेष्टा? व्यापारः। सर्वथा भवाञ्छब्दैरेव शब्दान् व्याचष्टे न किञ्चिदर्थजातं निदर्शयत्येवं जातीयका क्रियेति। क्रिया नामेयमत्यन्ताऽपरिदृष्टा, अशक्या पिण्डीभूता निदर्शयितुम्। यथा गर्भो निर्लुठितः। साऽसावनुमानगम्या। कोऽसावनुमानः। इह सर्वेषु साधनेषु सन्निहितेषु यदा पचतीत्येतद्भवति सा नूनं क्रिया। अथवा यया देवदत्त इह भूत्वा पाटलिपुत्रे भवति सा नूनं क्रिया। महाभाष्य १।३।१।१ धातोरर्थः क्रियेति रूपमालायाम्॥

१५—युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः १।४।१०५ तिङ्वाच्यकारकवाचिनि युष्मदि प्रयुज्यमाने-

१६—क्रियावाची "भू" आदि शब्दों की धातु संज्ञा है। वे दश गणों में विभक्त हैं। उन गणों के नाम क्रमशः यह हैं:—१ भ्वादि २-अदादि ३—जुहोत्यादि ४-दिवादि ५-स्वादि ६—तुदादि ७—रुधादि ८—तनादि ९-क्र्यादि १०—चुरादि॥

१७—संज्ञा धातु आदि के निमित्त जिनका विधान किया जाता है उनको प्रत्यय कहते हैं। जब किसी शब्द के आगे व्याकरणशास्त्र के नियमानुसार किसी प्रत्यय का विधान किया जाय तो उस प्रत्यय के परे होते हुए उस शब्द की 'अङ्ग' संज्ञा होती है। जैसे "राम" शब्द के आगे "भिस्" प्रत्यय का विधान शास्त्र द्वारा करें तो "भिस्" प्रत्यय के परे रहते "राम" शब्द की "अंग" संज्ञा होगी।

ऽप्रयुज्यमाने च मध्यमपुरुषो भवति॥ शेषे प्रथमः १।४।१०८ मध्यमोत्तमयोरविषये प्रथमपुरुषो भवति॥ अस्मद्युत्तमः १।४।१०७ अस्मद्युपपदे समानाभिधेये प्रयुज्यमानेऽप्रयुज्यमानेऽप्युत्तमपुरुषो भवति॥

१६-भूवादयो धातवः १।३।१ क्रियावाचिनो भ्वादयो धातुसंज्ञकाः भवन्ति।

भ्वाद्यदादिर्जुहोत्यादिर्दिवादिस्स्वादिरेव च॥
तुदादिश्च रुधादिश्च तनक्र्यादिचुरादयः॥

१७—प्रतीयते विधीयत इति प्रत्ययम्॥ यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम् १।४।१३ यः प्रत्ययो यस्मात्क्रियते तदादि शब्दस्वरूपं तस्मिन्प्रत्ययेपरे अङ्गसंज्ञकं भवति

१८—जो संज्ञा विषयक प्रत्यय (सुप्) और क्रिया विषयक प्रत्यय (तिङ्) से युक्त हों उन शब्दों की " पद " संज्ञा है। बिना " पद " बनाये वाक्यादि में उनका प्रयोग नहीं किया जा सकता।

१९—शब्द के अन्तिम अक्षर से पहिले वर्ण की " उपधा " संज्ञा है। जहां किसी अक्षर के स्थान में कोई " आदेश " किया जाता है वह उस अक्षर के स्थान में ही होता है। अर्थात् आदेश का विधान जिस अक्षर के स्थान में होता है उस अक्षर का लोप हो जाता है। " आगम " के विधान में उस अक्षर का लोप नहीं होता॥

क्रिया।

२०--क्रिया सम्बन्धी धातुओं एवम् प्रत्ययों के दो विभाग हो जाते हैं। १--परस्मैपदी और २--

---

१८—सुप्तिङन्तं पदम् १।४।१४ सुबन्तं तिङन्तं च पदसंज्ञक भवति। अपदं न प्रयुञ्जीत।

१९—अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा १।१।६५ अन्त्यादलः यः पूर्वो वर्णः स उपधा संज्ञकः भवति। प्रकृतिप्रत्ययोपघातपूर्वकं यस्यादेशोभवति स आदेशः। यत् प्रकृतिप्रत्ययानुपघातेन आगच्छति स आगमः।

२०—स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले १।३।७२॥ स्वरितेतोञितश्च धातोरात्मनेपदं स्यात् कर्तृगामिनि

आत्मनेपदी। परन्तु कोई उभयपदी भी हैं। इन का प्रयोग कहां किस प्रकार होता है इस के विशेष नियमों का वर्णन तो अन्यत्र करेंगे, तथापि नवीन विद्यार्थियों के समझने के लिये यहां इतना लिख देना आवश्यक समझते हैं कि जहां क्रिया का फल अपने में अर्थात् कर्त्ता में जावे वहां आत्मनेपद होता है, अन्यत्र परस्मैपद जानना चाहिये। जिस पदके धातु हों तदनुसार ही धातुओं में प्रत्यय युक्त होते हैं। यह सामान्य नियम है॥

२१--परस्मैपदी और आत्मनेपदी संज्ञक प्रत्यय निम्नलिखित हैं :—

परस्मैपदी प्रत्यय।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमपुरुष	ति	तस्	अन्ति

क्रियाफले॥ शेषात् कर्त्तरि परस्मैपदम् १।३।७८॥ आत्मनेपदहीनाद्धातोः कर्त्तरि परस्मैपदं भवति॥

२१—तिप्तस्झिसिप्थस्थमिब्वस्मस्तातांझथासाथांध्वमिड्वहिमहिङ् ३।४।७८॥

इमेऽष्टादश लादेशाः भवन्ति। लः परस्मैपदम् १।४।९९॥ लादेशाः परस्मैपदसंज्ञकाः भवन्ति। तङानावात्मनेपदम् १।४।१००॥ तङ् प्रत्याहारः शानच् कानचौ आत्मनेपदसंज्ञकाः भवन्ति। टित आत्मनेपदानां टेरे ३।४।७९॥ टितो लस्यात्मनेपदानां टेरेत्वं भवति। थासः से ३।४।८०॥ टितो लस्य थासः से भवति। आतो ङितः ७।२।८१॥ आतः परस्य ङितमाकारस्य "इय्" भवति॥

मध्यमपुरुष	सि	थस्	थ
उत्तमपुरुष	मि	वस्	मस्

आत्मनेपदी प्रत्यय ।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमपुरुष	ते (त)	आते (थाः)	अन्ते (झ)
मध्यमपुरुष	से (आताम्)	आथे (आथाम्)	ध्वे (वहि)
अन्यपुरुष	ए (अन्त)	वहे (ध्वम्)	महे (महि)

सूचना- आत्मनेपद सम्बन्धी प्रत्ययों के जो रूप कोष्ठान्तर में स्थित हैं, वे सूत्रानुसार प्रत्ययों के असली रूप हैं । इन रूपों का प्रयोग लङ्, लिङ्, लुङ् और लृङ् इन ही लकारों में होता है, अन्यत्र जो रूप कोष्ठ के बाहर हैं उनका प्रयोग होता है लङ् आदि के अर्थ की जहां आवश्यकता होगी वहीं इनका अर्थ लिखा जायगा । यहां इनके अर्थ की कोई आवश्यकता नहीं ॥

भ्वादिगणीय परस्मैपदी धातु

भू=होना	वद=कहना	स्मृ=याद करना
पच्=पकाना	दह=जलना	जि=जीतना
अर्च=पूजना	द्रु=गीला होना	नी=लेजाना
क्षि=नष्ट होना	चर=खाना, चरना	

२२-धातुओं और २१ वें प्रकरण में कहे प्रत्ययों के बीच में शब्दसाधनार्थ कुछ और प्रत्यय लाने पड़ते हैं। उन प्रत्ययों को 'विकरण' कहते हैं। सो इस प्रकार है। भ्वादिगण का विकरण "अ" है। अदादि एवं जुहोत्यादिगण विकरण रहित हैं परन्तु जुहोत्यादिगण में धातु को द्वित्व हो जाता है। इसी ही प्रकार दिवादिगण में "य" स्वादि में "नु" तुदादि में 'अ' रुधादि में 'न' तनादि में 'उ' क्र्यादि में 'ना' और चुरादिगण में "अय" विकरण लाना पड़ता है। यहां यह भी ध्यान रहे कि यह विकरण केवल वर्तमान काल (लट्) विध्याद्यर्थकरूप (लोट्, लिङ्) और अनद्यतन भूतकाल (लङ्) में ही लाये जाते हैं अन्यत्र उक्त विकरणों का प्रयोग नहीं करना पड़ता॥

धातूनां संस्कृतपाठः—भू सत्तायाम्। डुपचष् पाके। अर्च पूजायाम्। वद व्यक्तायां वाचि। दह भस्मीकरणे। द्रु गती द्रवणे च। स्मृ आध्याने। जि जये। णीञ् प्रापणे। क्षि क्षये। चर भक्षणे॥

२२-कर्त्तरि शप् ३। १। ६८ कर्त्रर्थे सार्वधातुके परे धातोः शप् विकरणो भवति। अदिप्रभृतिभ्यः शपः २। ४। ७२ लुक् भवति। दिवादिभ्यः श्यन् ३। १। ६९ दिव् इत्येवमादिभ्यो धातुभ्यः श्यन् विकरणो भवति। जुहोत्यादिभ्यः श्लुः २। ४। ७५ शपः श्लुः भवति। श्लौ ६। १। १० श्लौ परे धातोर्द्वे भवतः। स्वादिभ्यः श्नुः ३। १। ७३

२३-जिस धातु का अन्तिम स्वर एवम् उपधा में ह्रस्व अथवा दीर्घ इ, उ, ऋ में से कोई अक्षर हो तो उस के स्थान में क्रमशः गुण हो जाता है। अर्थात् 'इ, ई' के स्थान में "ए" एवम् "उ, ऊ" के स्थान में "ओ" हो जाता है। इसी ही प्रकार 'ऋ' के स्थान में 'अर्' होता है, परन्तु उपधा में ह्रस्व स्वर के होने पर ही गुण होगा॥

यथा-जि+अ (२२)+ति=जे (२३)+अ+ति। नी+अ (२२)+तः=ने (२३)+अ+तः। द्रु+अ (२२)

"षुञ्" इत्येवमादिभ्यो धातुभ्यः "श्नुः" भवति॥ तुदादिभ्यः शः ३।१।७७ "तुद" इत्येवमादिभ्यो धातुभ्यः शः भवति॥ रुधादिभ्यः श्नम् ३।१।७८ "रुधिर्" इत्येवमादिभ्यो धातुभ्यः "श्नम्" भवति॥ तनादिकृञ्भ्य उः ३।१।७९ "तनु" इत्येवमादिभ्यो धातुभ्यः कृञश्च उ प्रत्ययः स्यात॥ क्र्यादिभ्यः श्ना ३।१।८१ डुक्रीञ् इत्येवमादिभ्यो धातुभ्यः श्ना प्रत्ययो भवति॥ सत्यापपाशरूपवीणातूलश्लोकसेनालोमत्वचवर्मवर्णचूर्णचुरादिभ्योणिच३।१। २५ सत्यादिभ्यो णिच् भवति॥ सनाद्यन्ता धातवः ३।१।३२ सन् क्यच् काम्यच् क्यङ् क्यष् क्विप् णिच् यङ् यक् आय् ईयङ् णिङ् एते सनादयः। सनादयो प्रत्यया अन्ते येषान्ते प्रत्ययसहितधातुसंज्ञकाः भवन्ति। पुगन्तलघूपधस्य च। कर्तरि शप्॥

२३-सार्वधातुकार्द्धधातुकयोः ७।३।८४ सार्वधातुके आर्धधातुके च प्रत्यये परे इगन्तस्याङ्गस्य गुणो भवति॥ पुगन्तलघूपधस्य च ७।३।८६ पुगन्तस्य लघूपधस्य चाङ्गस्येको गुणः स्यात् सार्वधातुकार्धधातुकयोः॥

+अन्ति=द्रो (२३)+अ+अन्ति । भू+अ (२२)+सि=भो (२३)+अ+सि । स्मृ+अ (२२)+थस्=स्मर् (२३)+अ+थस् ॥ इत्यादि ॥

२४-पदान्त " स् " के आगे कोई अक्षर न हो तो उस के स्थान में " र् " हो जाता है फिर उस " र् " का विसर्ग बन जाता है ॥

यथा-वद्+अ (२२)+तस्=वद्+अ (२२)+तः (२४)=वदतः । स्मृ+अ (२२)+थस्=स्मर् (२३)+अ+थः (२४)=स्मरथः ॥

२५-संयुक्त स्वरों के पश्चात् कोई स्वर हो तो संयुक्तस्वरों के स्थान में क्रमशः अय् अव् आय् आव् हो जाता है ॥

यथा-जे+अ+ति=जय्+अ+ति=जयति । भो+अ+सि=भव्+अ+सि=भवसि ॥

२६-अपदान्त अकार से गुण परे हो तो पररूप एकादेश होता है ॥

२४-ससजुषो रुः ८।२।६६ पदान्तस्यसस्य सजुष्-शब्दस्य च रुः स्यात् ॥ खरवसानयोः विसर्जनीयः ८।३।१५ खरि अवसाने च पदान्तस्य रस्य विसर्गः स्यात् ॥

२५-एचोऽयवायावः ६।१।७८ ॥ एचः क्रमात् अय् अव् आय् आव् एते अचि परे भवन्ति ॥

२६-अतो गुणे ६।१।९७ अपदान्तादतोगुणे परतःपररूपमेकादेशः भवति । सामान्यशास्त्रतो नूनं विशेषो बलवान् भवेत् । परेणपूर्वबाधोवा प्रायशोदृश्यतामिदम् । विशेषाविशेषयोः विशेषे कार्यसम्प्रत्ययः । महाभाष्ये ॥

यथा-" दह्+अ+अन्ति " यहां पर " अन्ति " में जो अकार है उस में पहिला (२२ वें प्रक्रम से आया हुआ) अकार मिल जाता है ॥

अभिप्राय यह है कि यहां ३० वें प्रक्रम के नियमानुसार दीर्घ हो जाता, परन्तु यह २६ वां प्रक्रम उस नियम का अपवादरूप है। क्योंकि वह नियम सामान्य (साधारणतया सब ठौर काम में आजाने वाला) है और यह विशेष है । महाभाष्यकार ने कहा है कि सामान्य (सामान्यतया सब ठौर लगने वाले) नियमों से विशेष (मुख्य २ दशाओं में प्रयुक्त होने वाले) नियम बलिष्ठ होते हैं जिन का वर्णन ग्रन्थ में कहीं पर पूर्व और कहीं पर सामान्य नियमों से पश्चात् वर्णन किया हुआ होता है ऐसा ध्यान में रख बुद्धिमान् को सर्वत्र सङ्गति मिलानी चाहिये । अतः यह विशेष नियम होने से यहां पर "दह्+अ+अन्ति=दह्+अन्ति= दहन्ति " ऐसा रूप बना ॥

२७-अन्तस्थ अक्षर वर्गों के पांचवें अक्षर एवं झकार, भकार में से कोई अक्षर जिस सुप् वा तिङ् सम्बन्धी प्रत्यय के आदि में है यदि उस प्रत्यय के पूर्व अकार हो तो उस अकार के स्थान में दीर्घ आकार हो जाता है ॥

२७-अतो दीर्घो यञि ७ । ३ । १०१ अतोऽङ्गस्य दीर्घः स्यात् यञादौ सार्वधातुके परे ॥ सुपि च ७ । ३ । १०२ यञादौ सुपि परे अतोऽङ्गस्य दीर्घो भवति ॥

यथा—वद्+अ+मि=वद्+आ+मि=वदामि। अर्च्+अ+वस्=अर्च्+आ+वः=अर्चावः। पच्+अ+मस्=पच्+आ+मः=पचामः॥

सूचना—हमने जो २ उदाहरण दिये हैं वह सब वर्तमान काल सम्बन्धी क्रिया के ही हैं। विद्यार्थियों के सुभीते के लिये "भू" धातु के रूप साध कर नीचे लिखेंगे। अध्येताओं को उचित है कि उस ही प्रकार उक्त सब नियमों को लक्ष में रख अन्य धातुओं के भी रूपों को सिद्ध एवं कण्ठ करलें जिस से पूर्ण अभ्यास होजावे॥

परस्मैपदी "भू" धातु के रूप

वर्तमानकाल

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमपुरुष	भवति (२१,२२,२३,२५) वह होता है	भवतः (२१,२२,२३,२५,२४) वे २ होते हैं	भवन्ति (२१,२२,२३,२५) वे सब होते हैं
मध्यमपुरुष	भवसि (२१,२२,२३,२५) तुम होते हो,	भवथः (२१,२२,२३,२५,२४) तुम २ होते हो,	भवथ (२१,२२,२३,२५) तुम सब होते हो
उत्तमपुरुष	भवामि (२१,२२,२३,२५,२७) मैं होता हूं,	भवावः (२१,२२,२३,२५,२४,२७) हम २ होते हैं,	भवामः (२१,२२,२३,२४,२५,२७) हम सब होते हैं

* भ्वादिगणीय परस्मैपदी धातुसूची

वस्=रहना	खाद्=खाना
व्रज् वज्=जाना	नट्=नाचना
त्यज्=छोड़ना	गर्ज्=गरजना
तप्=दुखी होना	तर्ज्=धमकाना

भाषानुवाद करो।

पचामि	स्मरन्ति	भवति
तपसि	तर्जति	पचतः
वदति	जयसि	अर्चन्ति
त्यजावः	गर्जामि	वदसि
दहथः	नयतः	द्रवथः
व्रजतः	नटसि	स्मरथः
द्रवामः	क्षयथः	जयामि
वसथः	खादावः	नयावः

संस्कृत बनाओ।

मैं होता हूं	मैं धमकाता हूं
वह पकाता है	हम सब जीतते हैं
तुम कहते हो	हम दो गरजते हैं
हम सब छोड़ते हैं	वह ले जाता है
वे सब जलते हैं	वे सब नाचते हैं

---

* धातुनां संस्कृतपाठः-वस निवासे। वज व्रज गतौ। त्यज हानौ। तप संतापे। खादृ भक्षणे। नट नृतौ। गर्ज शब्दे। तर्ज भर्त्सने॥

तुम सब गीले होते हो	वे दो नष्ट होते हैं
हम दो जाते हैं	तुम खाते हो
तुम दो रहते हो	तुम सब पूजते हो
वे दो याद करते हैं	तुम दो कहते हो

संज्ञा

२८—संज्ञाओं को कारकों में परिणत करने वाले किंवा विभक्तिसूचक "सु" आदि प्रत्यय निम्न-लिखित हैं। इन का प्रयोग धातु और प्रत्ययों को छोड़ कर अर्थवान् शब्दों एवं कृदन्त तद्धित और समास में सर्वदा किया जाता है। इन ही २१ प्रत्ययों को "सुप्" कहते हैं॥

विभक्तिसूचक प्रत्यय

विभक्तयः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	स्	औ	अस्
द्वितीया	अम्	औ	अस्

२८—स्वौजसमौट्छष्टाभ्यांभिस्ङेभ्यांभ्यस्ङसिभ्यांभ्यस्ङसोसाम्ङ्योस्सुप् ४। १। २ ङ्यन्तादाबन्तात्प्रातिपदिकाच्च परे स्वादयः प्रत्यया भवन्ति। अर्थवद्धातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् १। २। ४५ धातुं प्रत्ययं प्रत्ययान्तं च वर्जयित्वा अर्थवत् शब्दरूपं प्रातिपदिकसंज्ञकम् भवति॥ कृत्तद्धितसमासाश्च १। २। ४६ कृत्तद्धितान्तौ समासाश्च प्रातिपदिकसंज्ञकाः भवन्ति॥

तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ए	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमी	अस्	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	अस्	ओस्	आम्
सप्तमी	इ	ओस्	सु

अकारान्त-पुल्लिङ्ग-शब्दसूची।

अश्व=घोड़ा	छाग=बकरा	युवक=जवान
अगद=दवा	जनक=पिता	वानर=बन्दर
अग्रज=बड़ा भाई	दक्ष=होशियार	वृष=बैल
आम्र=मौलसिर	नर=मनुष्य	मोदक=लड्डू
कटाह=कढ़ाह	नट=नट	वृद्ध=बुड्ढा
बाल=बालक	नृप=राजा	विप्र=ब्राह्मण
मूर्ख=बेवकूफ	पण्डित=विद्वान्	शिष्य=विद्यार्थी
गोप=ग्वाला	पाठ=सबक	सूद=रसोइया
कोश=ख़जाना	भिक्षुक=भिखारी	सिंह=शेर
चन्द्र=चांद	भृत्य=नौकर	सुत=बेटा

२८-ह्रस्व वा दीर्घ अकार से परे कोई संयुक्त स्वर हो तो पूर्व पर के स्थान में तुल्यतम वृद्धि एकादेश होजाता है। अभिप्राय यह है कि यदि अ वा आ से परे ए अथवा ऐ हो तो पूर्वपर के स्थान में "ऐ" इस ही प्रकार "ओ" वा "औ" इन अक्षरों

२९-वृद्धिरेचि ६।१।८८ अवर्णादेचि परे वृद्धिरेकादेशः भवति॥

में से कोई अक्षर परे हो तो पूर्वपर के स्थान में "औ" होजाता है॥

यथा—राम+औ=रामौ॥

३०—संयुक्त स्वरों को छोड़ अन्य स्वरों से यदि सजातीय उन ही स्वरों के ह्रस्व वा दीर्घ रूप परे हों तो पूर्व पर के स्थान में उन स्वरों का ही दीर्घ रूप आदेश होजाता है॥

यथा—नर+अस्=नराः (३०, २४)॥

३१—मूल स्वरों एवं उन के दीर्घ रूपों से "अम्" (एकवचन सम्बन्धी) प्रत्यय परे हो तो उस (अम्) प्रत्यय का अकार पहिले स्वर में मिल जाता है अर्थात् फिर "अम्" प्रत्यय के अकार का उपयोग नहीं होता किन्तु वह लुप्त होजाता है॥

यथा—अश्व+अम्=अश्वम्॥

३२—जब मूल स्वरान्त पुल्लिङ्ग शब्दों से परे द्वितीया की "अस्" विभक्ति हो तो उस अस्

३०—अकः सवर्णे दीर्घः ६।१।१०१ अकः सवर्णेऽचि परे पूर्वपरयोः दीर्घ एकादेशः भवति॥

३१—अमि पूर्वः ६।१।१०७ अकोऽम्यचि पूर्वरूपमेकादेशः भवति॥

३२—प्रथमयोः पूर्वसवर्णः ६।१।१०२ अकः प्रथमाद्वितीययोरचि पूर्वसवर्णदीर्घ एकादेशः भवति॥ तस्माच्छसो नः पुंसि ६।१।१०३ पूर्वसवर्णदीर्घात्परो यश्शसः सः तस्य नः स्यात् पुंसि॥

प्रत्यय के अकार के स्थान में मूलस्वरान्त शब्द के अन्तिम स्वर को ही दीर्घ रूप आदेश होजाता है, फिर इस प्रकार दीर्घ हो जाने पर जो प्रत्यय का " स् " शेष रहता है उस को "न्" होजाता है ॥

यथा—राम+अस्=रामान् । अश्व+अस्=अश्वान् ॥

विभक्तियों का प्रयोग ।

३३—कर्ता उसे कहते हैं जो क्रिया को स्वतन्त्रता से सम्पादन करता है वा प्रेरणा करके दूसरे से करवाता है । ऐसे प्रयोजक कर्ता को हेतु भी कहते हैं ॥

३४—जहां पर शब्द का जो अर्थ है उस ही को दर्शाना हो वा लिङ्गमात्र (केवल पुल्लिङ्ग वा स्त्रीलिङ्ग अथवा नपुंसकलिङ्ग) जतलाना हो वा वचन मात्र (एक, द्वि, बहु) बताना हो अथवा परिमाण ही प्रकट करना हो एवम् कर्ता वा कर्म अभिहित अर्थात् जहां क्रिया का फल कर्ता वा कर्म में ही जावे वहां प्रथमा विभक्ति होती है ॥

३३—स्वतन्त्रः कर्ता १ । ४ । ५४ क्रियायां स्वातन्त्र्येण विवक्षितोऽर्थः कर्तृसंज्ञः भवति ॥ तत्प्रयोजको हेतुश्च १ । ४ । ५५ कर्तुः प्रयोजको हेतुसंज्ञः कर्तृसंज्ञश्च भवति ॥

३४—प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा २ । ३ । ४६ प्रातिपदिकार्थादिमात्रे प्रथमा भवति । अभिहिते कर्तरि च ॥

यथा—अर्थमात्र में "धर्मः"। लिंगमात्र में "नरः" (पु०), धनम् (न०), कन्या (स्त्री०)। वचनमात्र में "अश्वाः सिंहः सुतौ।" परिमाणमात्र में "द्रोणः"। अभिहित कर्त्ता और कर्म में "शिष्यः वदति क्रियते कटः"॥

३५—कर्ता का जो इष्टतम हो अर्थात् जिस को क्रिया के द्वारा सिद्ध करना चाहे वा करे एवम् क्रिया के द्वारा कर्ता का जो अनीप्सित (न चाहा हुवा) हो, इस ही प्रकार जो अकथित (दुह्, याच् आदि धातु जिन में अपादानादि अविवक्षित) हो उस कारक की कर्म संज्ञा है॥

३६—(क) अनुक्त अर्थात् क्रियाफल से रहित कर्मकारक में एवम् काल और मार्गवाची शब्दों के अत्यन्त संयोग में द्वितीया विभक्ति होती है॥

यथा—नरः ब्राह्मणम् अर्चति=मनुष्य ब्राह्मण को पूजता है। यहां ब्राह्मण को पूजना कर्ता का इच्छित

३५—कर्तुरीप्सिततमं कर्म १।४।४९ कर्तुः क्रियया यदिष्टतमं तत् कर्मकारकं संज्ञकं भवति॥तथायुक्तं चानीप्सितम् १।४।५० कर्तुः क्रियया यदनीप्सिततमं तत्कारकमपि कर्मसंज्ञकं भवति॥ अकथितं च १।४।५१ अकथितं च यत्कारकं तत्कर्मसंज्ञं भवति॥

३६—कर्मणि द्वितीया २।३।२ अनुक्ते कर्मणि द्वितीया भवति॥ कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे २।३।५ कालाध्वनोः अत्यन्तसंयोगेऽपि द्वितीया भवति॥

कार्य है। चौरान् पश्यति=चोरों को देखता है। कण्टकान् लंघयति=कांटों को लांघता है। यहां चोरों को देखना कांटों को लांघना कर्ता का इच्छित नहीं, परन्तु संयोगवश देखना और कांटों को लांघना पड़ा, अतः यह कर्ता का अनिच्छित कार्य है। बालकम् पन्थानम् पृच्छति=लड़के से मार्ग पूछता है। शिष्यं धर्ममनुशास्ति=शिष्य को धर्म का उपदेश करता है। यहां बालक शिष्य शब्दों में अन्य कारक अकथित हैं। इस प्रकार इच्छित, अनिच्छित, और अकथित कर्मकारक में परिगणित होकर द्वितीया विभक्ति के ग्राहक हुए हैं। मासमधीतोनुवाकः=एक महीने तक लगातार अनुवाक पढ़ा। क्रोशं कुटिला नदी=१ कोश तक नदी बराबर टेढ़ी है। यहां समय और मार्ग के अत्यन्त संयोग में द्वितीया विभक्ति हुई है॥

(ख) धातु भी तीन प्रकार के होते हैं १-अकर्मक (२) सकर्मक और (३) द्विकर्मक—लज्जा

(ख) लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः ३।४।६९ लकाराः सकर्मकेभ्यः कर्मणि कर्तरि च स्युरकर्मकेभ्यो भावे कर्तरि च॥
लज्जासत्तास्थितिजागरणं, वृद्धिक्षयभयजीवितमरणम्।
शयनक्रीडारुचिदीप्त्यर्थं, धातुगणन्तम कर्मकमाहुः॥
दुहियाचिरुधिप्रच्छिभिक्षिचिञामुपयोगनिमित्तमपूर्वविधौ।
ब्रुविशासिगुणेन च यत्सचते तदकीर्तितमाचरितं कविना॥
नीवह्योर्हरतेश्चापि गत्यर्थानां तथैव च, द्विकर्मकेषु ग्रहणं द्रष्टव्यमिति निश्चयः। विपरीतन्तु यत्कर्म तत्कलन कवयो विदुः॥

सत्तादि अर्थवाले अकर्मक धातु वह हैं जिन के साथ वाक्य में कर्म का योग नहीं होता । जैसे नृपः जागर्ति=राजा जगता है । यहां जगना रूप क्रिया का कर्मकारक में रूप नहीं होता । सकर्मक धातु वह है, जिन के साथ कर्म का योग होता है । यहां यह भी ध्यान रहे कि देश काल (समय) भाव (आशय वा गुण) एवम् अध्वगन्तव्य (मार्ग-गन्तव्य) के अर्थ में अकर्मक धातु भी सकर्मक हो जाती है । यथा "नृपम् जागरयति=राजा को जगाता है" यहां जगाना सकर्मक हो गया । नी, वहि, हर्, एवम् गत्यर्थक धातुओं का ग्रहण द्विकर्मक में होता है अर्थात् इन धातुओं के योग में दो २ कर्म भी हो जाते हैं । कोई विद्वान् ईप्सिततम से भिन्न जो कर्म है उस की कल्म संज्ञा करते हैं । अर्थात् जिस में कर्म संज्ञा के सब काम नहीं किये जाते, किन्तु द्वितीयामात्र की जाती है; अथवा जिस किसी वाक्य में

लज्जा, सत्ता, स्थिति, जागरण, वृद्धि, क्षय, भय, जीवन, मरण, शयन, क्रीडा, रुचि और दीप्ति इन अर्थों के धातु अकर्मक होते हैं । दुह्, याच्, रुध्, प्रच्छ, भिक्ष, चिञ्, ब्रुव्, शास् इन धातुओं के उपयोग के निमित्त जो अपादानादि कारकों से कुछ न किया गया हो तो उस को " अकथितं च "सूत्र से कर्मसंज्ञा होती है ॥ कालभावाध्वगन्तव्या कर्मसंज्ञाह्यकर्मणाम् । देशश्चाकर्मणां कर्मसंज्ञो भवतीति वक्तव्यम् ॥-

कर्म का कार्य हो उस के अतिरिक्त जो अन्य अप्रधान होता है उस की कल्म संज्ञा है । जैसे भारं वहति ग्रामम्=गांव को बोझा लेजाता है । यहां भार शब्द में तो कर्म पूर्णतया लक्षित है, परन्तु ग्राम में भी द्वितीया हुई, अतः इस की कल्म संज्ञा है ॥

अकारान्त पुल्लिंग नर शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	नरः २८,२४	नरौ २८,२८	नराः २८,२८,२४
	१ मनुष्य	२ मनुष्य	बहुत से मनुष्य
द्वितीया	नरम् २८,३१	नरौ २८,२८	नरान् २८,२८,३२
	१ मनुष्य को,	२मनुष्योंको,	बहुतसे मनुष्योंको

अकारान्त पुंल्लिङ्ग शब्दसूची।

अनूचान=महाविद्वान्	इतिहास=तवारीख़
अध्यापक=पण्डित	इन्दुर=चूहा
अंश=हिस्सा	उत्ताप=दुःख
आतुर=रोगी	उपद्रव=विघ्न
आम्र=आम	उपकार=भलाई
आतंक=रोग, भय	उपचार=उपाय
आवेदक=सायल, निवेदक	एण=मृग
आकाश=आसमान	कृष्ण=किसी का नाम
कंकाल=अस्थिपञ्जर	खग=पक्षी
कठेर=दरिद्र	गद=विष
कंटक=कांटा	गज=हाथी

अपूप=पूआ
कर=हाथ
कर्ण=कान
काक=कौवा
कूप=कूआ
चौर=चोर
राम=किसी का नाम
शिव=ईश्वर
नद=दरिया

भ्वादिगणीय परस्मैपदी धातुसूची*।

अर्ज,सर्ज=इकट्ठा करना
मूष=चोरना
एज्=कांपना
हल्=जोतना
लज=भूनना
मथ्=मथना
वट=लपेटना
वम=उगलना
चर्व=चबना,
भृ=भरना, रखना
रक्ष=पालना
धृ=धारना
चूष=चूसना
याच्=मांगना
हस=हंसना
खन्=खोदना
ग्लै=ग्लानि करना म्लै=मुरझाना ध्यै=सोचना

उदाहरण।

अश्वः व्रजति=घोड़ा जाता है। बालकौ नयतः=दो लड़के ले जाते हैं। पण्डिताः जयन्ति=

---

* अर्जषर्ज अर्जने। एजृ कम्पने। लसलजि भर्जने। वट वेष्टने। चर्व अदने। रक्ष पालने। मूष स्तेये। मथे विलोडने। टुवम उद्गिरणे। भृञ् भरणे। धृञ् धारणे। टुयाचृ याच्ञायाम्। खनु अवदारणे। ग्लै हर्षक्षये। म्लै म्लाने। ध्यै चिन्तायाम्। चूष पाने। हल विलेखने। हसे हसने॥

पण्डित लोग जीतते हैं। नरः वृषम् नयति=आदमी बैल को लेजाता है। मोदकौ नयामि=मैं दो लड्डुओं को लेजाता हूं। जनकः सुतान् तर्जति=पिता पुत्रों को धमकाता है॥

भाषा बनाओ।

शिष्याः व्रजन्ति। वृषौ चरतः। मूर्खः त्यजति। वृद्धौ वदथः। सुताः वदन्ति। नटाः नटन्ति। सिंहः गर्जति। चौराः कथन्ति। ब्राह्मणः जयति। सुतः भवति। भृत्यः खादति। पाठम् स्मरावः। बालान् तर्जामि। मोदकान् खादामः। कोशम् नयन्ति। सूदः अपूपान् पचति। सूपम् पचामि। नृपः चौरम् तर्जति। वैद्यः अगदम् नयति। शिष्याः वेदम् स्मरन्ति। ब्राह्मणाः शिवम् अर्चन्ति। युवकः नयति भृत्यम्। जनकः सुतान् नयति॥

संस्कृत बनाओ।

भिखारी जाते हैं। मूर्ख दुःखी होते हैं। राम बसता है। दो चोर जाते हैं। बेटा पूओं को खाता है। रसोइया जलता है। नौकर खजाने को लेजाते हैं। घोड़े चरते हैं। बन्दर जाते हैं। शिष्य पाठ को याद करते हैं। मैं आम चूसता हूं। कृष्ण आमों को चूसता है॥

परस्मैपदी धातुसूची*।

दिवादिगणीय धातु	चुरादिगणीय धातु
नश्=नष्ट होना	कथ्=कहना
त्रस्=डरना	रच्=बनाना
अस्=फेंकना	स्पृह्=चाहना
तुष्=प्रसन्न होना	गण्=गिनना
गुप्=घबड़ाना	प्रथ्=प्रख्यात करना
क्रुध्=क्रोध करना	मृग्=ढूंढना
तृप्=तृप्त होना	भूष्=सजाना
द्रुह्=द्रोह करना (मारने की इच्छा)	लक्ष्=देखना, निशाना लगाना

सूचना—हम २२वें प्रक्रम में बतला चुके हैं कि दिवादिगण का विकरण "य" और चुरादिगण का विकरण "अय्" है उक्त विकरणों के योग से उक्त गणों के धातुओं के रूपों को बना लेना विद्यार्थियों को उचित है॥

यथा—नश्+य+ति=नश्यति। कथ्+अय्+ति=कथयति॥

---

*धातुपाठः—णश अदर्शने। त्रसी उद्वेगे। असु क्षेपणे। तुष प्रीतौ। गुप व्याकुलत्वे। क्रुध क्रोधे। तृप प्रीणने। द्रुह जिघांसायाम्॥ कथ वाक्यप्रबन्धने। रच प्रतियत्ने। स्पृह ईप्सायाम्। गण संख्याने। प्रथ प्रख्याने। मृग अन्वेषणे। भूष अलंकरणे। लक्ष आलोचने॥

दिवादिगणीय "तुष्" धातु के रूप।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमपुरुष	तुष्यति २१, २२ वह प्रसन्न होता है	तुष्यतः २१,२२,२४ वे दो प्रसन्न होते हैं	तुष्यन्ति२१,२२,२४ वे सब प्रसन्न होते हैं
मध्यमपुरुष	तुष्यसि २१,२२ तुम प्रसन्न होते हो	तुष्यथः२१,२२,२४ तुम २ प्रसन्न होते हो	तुष्यथ २१,२२,२४ तुम सब प्रसन्न होते हो
उत्तमपुरुष	तुष्यामि२१,२२,२७ मैं प्रसन्न होता हूं	तुष्यावः२१,२२,२७,२४ हम दो प्रसन्न होते हैं	तुष्यामः२१,२२,२७,२४ हम सब प्रसन्न होते हैं

चुरादिगणीय " रच् " धातु के रूप।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमपुरुष	रचयति २१, २२ वह बनाता है	रचयतः २१,२२,२४ वे दोनों बनाते हैं	रचयन्ति २१, २२ वे सब बनाते हैं
मध्यमपुरुष	रचयसि २१, २२ तुम बनाते हो	रचयथः २१,२२,२४ तुम २ बनाते हो	रचयथ २१, २२ तुम सब बनाते हो
उत्तमपुरुष	रचयामि२१,२२,२७ मैं बनाता हूं	रचयावः२१,२२,२७,२४ हम २ बनाते हैं	रचयामः२१,२२,२७,२४ हम सब बनाते हैं

वाक्यों के उदाहरण।

वृद्धौ तुष्यतः = २ बूढ़े प्रसन्न होते हैं। चौराः नश्यन्ति=चोर नष्ट होते हैं। अध्यापकः कथयति=पाठक कहता है। रामः त्रस्यति=राम डरता है। मूर्खाः क्रुध्यन्ति=मूर्ख क्रोध करते हैं। वानरान् गणयति=बन्दरों को गिनता है। अगदम् रचयति=औषधि बनाता है। भिक्षुकः अपूपम् पश्यति=भिखारी पूवों को देखता है। जनकः सुतम् भूषयति=पिता पुत्र को सजाता है। बालकः मोदकान् अस्यति=लड़का लड्डुओं को फेंकता है। युवकः कृष्णम् मृगयति=जवान कृष्ण को ढूंढता है। चौराः गुप्यन्ति=चोर घबड़ाते हैं।

भाषा बनाओ।

नरः गुप्यति। रामम् मृगयसि। भिक्षुकाः चस्यन्ति। भृत्यान् गणयामि। ब्राह्मणाः प्रथयन्ति। शिष्यान् लक्षयामः। नृपः मृगयति। वैद्यः मोदकान् गणयति। नटौ कथयतः। मूर्खः सुतम् भूषयति। नृपाः तुष्यन्ति। नृपः कोशम् लक्षयति। सूदः सूपम् रचयति। रामः मृगान् मृगयति। अश्वौ मृगयावः॥

संस्कृत बनाओ।

चोर देखता है। मनुष्य प्रख्यात करता है। नौकर बनाता है। बेटे कहते हैं। अध्यापक घोड़ा ढूंढता है। जवान क्रोध करता है। लड़के को सजाता हूं। बुड्ढा घबड़ाता है। रसोइये को ढूंढता हूं। मैं वानरों को गिनता हूं। राजा चोर को देखता है। ब्राह्मण ईश्वर को देखते हैं। भिखारी दाल को ले जाता है। तुम दवा को कहते हो। मैं दवा बनाता हूं। राम घोड़ों को गिनता है। वह आमों को चूसता है। वह हाथियों की रक्षा करता है। राम ग्लानि करता है। मैं ईश्वर का ध्यान करता हूं। दरिद्र को देखता हूं। कृष्ण कान को भूषित करता है। कछुवे डरते हैं।

संज्ञा।

अकारान्त नपुंसक शब्दसूची॥

धन=द्रव्य　　हृदय=दिल　　हिरण्य=सोना

ज्ञान=बोध	फल=फल	वस्त्र=कपड़ा
गृह—घर	धान्य—नाज	यन्त्र—कल, मैशीन
क्षेत्र-खेत	तृण—घास	शरीर-जिस्म, देह
जल—पानी	आमिष—मांस	नख—नाख़ून
सुख—आराम	पुस्तक—किताब	अन्न—भोजन
दुःख-तकलीफ़	विष—ज़हर	पुण्य-धर्म, भलाई
नेत्र आंख	वन—जंगल	पाप—अधर्म, बुराई
औषध-दवा	गात्र-अंग, अंक	पङ्कज=कमल

३७-अकारान्त नपुंसकलिंग से " सु " (प्रथमा का एक वचन सम्बन्धी) प्रत्यय परे हो तो उसके स्थान में "अम्" हो जाता है ॥

यथा—ज्ञान+सु = ज्ञान+अम् = ज्ञानम् ॥

३८—नपुंसक लिंग से " औ "(प्रथमा द्वितीया का द्विवचन सम्बन्धी) प्रत्यय परे हो तो उसके स्थान में " ई आदेश हो जाता है एवम् " अस् "

३७—अतोऽम् ७ । १ । २४ अतोऽङ्गात् क्लीबात्स्वमोरम् भवति ॥

३८—नपुंसकाच्च ७ । १ । १९ क्लीबादौङः शी भवति । औङ् इत्यौकार विभक्तेः संज्ञा ॥ जश्शसोः शिः ७ । १ । २० क्लीबात् जश्शसोः शिः भवति ॥ शि सर्वनामस्थानम् १ । १ । ४२ शि इत्येतत्सर्वनामस्थानसंज्ञकं भवति नपुंसकस्य झलचः ७ । १ । ७२ झलन्तस्याऽजन्तस्य च क्लीबस्य नुमागमो भवति सर्वनामस्थाने परे ॥ सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ ६ । ४ । ८ नान्तस्याङ्गस्योपधाया दीर्घो भवत्यसम्बुद्धौ सर्वनामस्थाने च परे ॥

(प्रथमा द्वितीया का बहुवचन सम्बन्धी) परे हो तो उसके स्थान में "नि" आदेश हो जाता है और इस "नि" से पूर्व का स्वर दीर्घ हो जाता है।

यथा-ज्ञान+औ = ज्ञान+ई। ज्ञान+अस् = ज्ञान+नि = ज्ञानानि ॥ धन+अस् = धनानि ॥

३९—ह्रस्व वा दीर्घ अकार से परे मूल एवम् पारिभाषिक स्वर परे हों अथवा उन के दीर्घ रूप परे हों तो पूर्वपर के स्थान में तुल्य तम गुणादेश हो जाता है। अर्थात् अ+इ = ए। अ+ई = ए। आ+इ = ए। आ+ई = ए। अ+उ = ओ। अ+ऊ = ओ। आ+ उ = ओ। आ+ऊ = ओ। ऋ परे हो तो "अर्" हो जाता है ॥

यथा-ज्ञान+ई = ज्ञाने।

अकारान्त नपुंसक लिंग "पुस्तक" शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पुस्तकम् २८,३७,३१	पुस्तके २८,३७,३६	पुस्तकानि २८,३८
	एक पुस्तक	दो पुस्तक	बहुतसे पुस्तक
द्वितीया	पुस्तकम् २८,३७,३१	पुस्तके २८,३८,३६	पुस्तकानि २८,३८
	१ पुस्तक को	२ पुस्तकों को	बहुतसी पुस्तकों को

वाक्यों के उदाहरण।

सुखम् भवति सुख होता है। वनानि दहन्ति-जंगल जलते हैं। पुस्तके मृगयासि-२ किताब ढूंढता

३९-आद्गुणः ६। १। ८७ अवर्णादचि परे पूर्वपरयोरेकागुणादेशो भवति संहितायाम् ॥

हूं। अन्नम् पचति—अन्न पचता है। नखम् भूषयामि—नाखून सजाता हूं। हिरण्यम् पश्यथः—तुम दो सोना देखते हो। फलानि नयसि—तू फलों को ले जाता है। वृद्धः वस्त्राणि अस्यति—बुड्ढा कपड़ों को फेंकता है। वृषाः तृणानि चरन्ति—बैल घास खाते हैं॥

भाषा बनाओ।

गृहम् व्रजति। जलम् अस्यति। पण्डिताः पुस्तकानि रचयन्ति। युवकः वस्त्राणि गणयति। रामः विषम् नयति। नरः शरीरम् भूषयति। दुखम् भवति। भूपः क्षेत्राणि गणयति। तृणानि द्रवन्ति। भृत्यः धनम् नयति। सिंहाः आमिषं खादन्ति। वृद्धौ गृहम् त्यजतः। वानरः शरीरम् त्यजति। पापम् त्यजसि। धान्यम् नयामि। गृहम् व्रजामः। वानराः फलानि खादन्ति। शिष्याः पुस्तकम् स्मरन्ति। धान्यानि मृगयामः। अनूचानः पुण्यम् प्रथयति॥

संस्कृत बनाओ।

पुण्य होता है। मैं धन को लेजाता हूं। हम सब १ पुस्तक को बनाते हैं। राम खेत को जाता है। राजा धनों को चाहता है। जङ्गल जलते हैं। अधर्म नष्ट होता है। कलों को बनाता है। सोना लेजाता है। घोड़ा घास खाता है। शिष्य पुस्तकों को ले जाते हैं। अध्यापक प्रसन्न होता है। मूर्ख जाते हैं। तुम बन्दरों को गिनते हो। मैं लड्डुओं को गिनता हूं। तुम सब कपड़ों को बनाते हो॥

क्रिया ।

* तुदादिगणीय परस्मैपदी धातु ।

तुद–पीड़ा देना	विश–घुसना
कृष–जोतना	स्पृश–छूना
वृश्च–काटना	विध–विधान करना
ऋच–तारीफ़ करना	क्षुर–हजामत करना
तृप–तृप्त होना	पृच्छ–पूछना
मिल–मिलना	त्रुट–तोड़ना, काट डालना
लिख–लिखना	मुच्–छोड़ना
स्फुर–फड़कना	

४०–हम २१ वें प्रकम में बतला चुके हैं कि तुदादिगण का विकरण "अ" है । अतएव उक्त विकरण को युक्त कर वर्तमानादि में रूप बना लेने चाहिएं । यहां यह शङ्का हो सकती है कि भ्वादिगण का भी विकरण "अ" है और तुदादि का भी । जब दोनों का विकरण एक ही है तो फिर तुदादिगण के धातुओं को पृथक् करने की आवश्यकता क्या हुई ? अथवा इन

---

* धातूनां संस्कृतपाठः–तुद व्यथने । कृष विलेखने । ओव्रश्चू छेदने । तृप तृम्फ तृप्तौ । ऋच स्तुतौ । मिल श्लेषणे । लिख अक्षरविन्यासे । स्फुर स्फुरणे । विश प्रवेशने । स्पृश संस्पर्शने । विध विधाने । क्षुर विलेखने । प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् । त्रुट छेदने । मुच्लृ मोक्षणे ॥

४०–सार्वधातुकमपित्–क्ङिति च १।१।५ गित्क्ङित् निमित्ते इग् लक्षणे गुणवृद्धी न स्तः ॥

दोनों गणों के वर्तमानादि काल के रूप में कितना वा क्या भेद रहेगा? इन प्रश्नों के उत्तर में इस पुस्तक के पाठकों के निमित्त अभी यहां इतना ही लिखना पर्याप्त है कि भ्वादिगणों में २३ वें प्रक्रम से धातु के उपधा को गुणादेश हो जाता है, परन्तु इस गण में नहीं होता। इस के अतिरिक्त जो अन्य भेद होंगे वे यथास्थान दर्शाये जायेंगे॥

तुदादिगणीय परस्मैपदी "विश" धातु के रूप।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमपुरुष	विशति	विशतः	विशन्ति
	२१, २२	२१, २२, २४	२१, २२
	वह १ घुसता है	वे दो घुसते हैं	वे सब घुसते हैं
मध्यमपुरुष	विशसि	विशथः	विशथ
	२१, २२	२१, २२, २४	२१, २२
	तुम घुसते हो	तुम दो घुसते हो	तुम सब घुसते हो
उत्तमपुरुष	विशामि	विशावः	विशामः
	२१, २२, २७	२१, २२, २४	२१, २२, २७, २४
	मैं घुसता हूं	हम दो घुसते हैं	हम सब घुसते हैं।

वाक्यों के उदाहरण।

औषधम् पृच्छति-दवा को पूछता है। कठेराः लज्जन्ति-दरिद्र शर्माते हैं। शिवम् ऋचामि-ईश्वर की स्तुति करता हूं। इतिहासं पृच्छथ-तुम सब इतिहास को पूछते हो। कृष्णः मिलति-कृष्ण मिलता है। चोरः तुदति-चोर दुःखी होता है। रामः कंकालम् स्पृशति-राम अस्थिपञ्जर को छूता है। शिष्याः

इतिहासम् लिखन्ति–विद्यार्थी इतिहास को लिखते हैं। क्षेत्रम् कृषावः– खेत हम २ जोतते हैं। इन्दुरम् मुञ्चामि–चूहे को छोड़ता हूं॥

भाषा बनाओ।

गात्रम् स्पृशासि। पुस्तकम् लिखसि। कृष्णः पृच्छति। भिक्षुकाः मिलन्ति। रामः लज्जति। औषधानि विधति। रामम् मुञ्चामि। विप्राः ऋचन्ति। नेत्रे स्फुरतः। कृष्णः क्षुरति। रामः विशति। नरः धान्यम् स्पृशति। अनूचानाः पुस्तकान् लिखन्ति। अध्यापकः शिष्यम् पृच्छति॥

संस्कृत बनाओ।

कृष्ण मिलता है। खेत जोतते हो। होशियार लिखते हैं। दरिद्र छूता है। पण्डित पूछता है। घायल लिखते हैं। बड़ा भाई मिलता है। नौकर कढ़ाह को पूछता है। मोतबिर विधान करते हैं। १ आंख फड़कती है। पाठक पुस्तकों को लिखते हैं। कपड़े को पूछता है।

सूचना–हम ८ वें प्रक्रम में बतलाचुके हैं, वाक्य में सन्धि करना, न करना प्रयोक्ता की इच्छा के आधीन है इसी हेतु बालकों के सौकरार्थ अब तक हमने जो वाक्यमाला लिखी है उन सब में सन्धि का प्रयोग नहीं किया है; परन्तु अब आगे थोड़ा २ वाक्यों में भी सन्धि करना आरम्भ करेंगे। जिस

से सन्धिसम्पन्न वाक्यों का भी ज्ञान अध्येताओं को यथावत् होने लगे। २५वें, २८वें, ३०वें, ३८वें प्रक्रमों को भी पदान्त सन्धि के लिये स्मरण रखना आवश्यक है। तद्व्यतिरिक्त अन्य नियमों का उल्लेख आरम्भ करते हैं॥

४१ इ उ ऋ इन स्वरों वा इन के दीर्घ रूपों के आगे कोई असवर्ण स्वर हो तो उक्त स्वरों को क्रमशः य्, व्, र् आदेश होते हैं। अर्थात् इ, ई के स्थान में "य्" एवं उ, ऊ के स्थान में "व्" और ऋ ॠ के स्थान में "र्" आदेश होता है॥

यथा-पतति+अश्वः=पतत्यश्वः॥

४२ यदि पदान्त 'अः' से परे अकार एवम् घोषवर्ण हो तो उस "अः" के स्थान में "ओ" हो जाता है॥

यथा-नरः+व्रजति=नरो व्रजति॥

४३-पदान्त ए, ओ से आगे यदि ह्रस्व अकार हो तो वह अकार पूर्व स्वर में मिल जाता है॥

४१-इको यणचि ६।१।७७ इकः स्थाने यण् भवत्यचि परे॥

४२-अतो रोरप्लुतादप्लुते ६।१।११३ अप्लुतादतः परस्य रोः उः भवत्यप्लुतेति परे॥ हशि च ६।१।११४ अप्लुतादतः परस्य रोः उः भवति हशि परे। आद्गुणः (३९)॥

४३-एङः पदान्तादति ६।१।१०९ पदान्तादेङोऽति परे पूर्वरूपमेकादेशः भवति॥

यथा-रामः+अर्चति=रामो (४२) +अर्चति=रामोर्चति (४३) ॥

वाक्यों के उदाहरण ।

वेदम् पठति=वेद पढ़ता है । शास्त्रम् नयति=शास्त्र को लेजाता है । पश्यत्यध्यापकम्=पढ़ाने वाले को देखता है । नेत्रे स्फुरतः=दोनों आंख फड़कती हैं । रामः क्षेत्रम् कृषति=राम खेत को जोतता है । सृजति हारम्=माला को बनाता है । गजम् स्पृशति=वह हाथी को छूता है । रामः क्षुरति=राम हजामत करता है । नरौ पृच्छतः=२ आदमी पूंछते हैं ॥

भाषा बनाओ ।

पत्रम् लिखति । हृदयम् तुदति । क्षेत्रान् कृषसि । चर्मकाराः चर्मम् प्राप्नुवन्ति । खादत्यगदम् । भिक्षुको मिलति । पुण्यम् भवति । कचति शिवम् । सिंहाः खादन्त्यामिषम् । नरः सृजत्यौषधम् । नृपः चौरम् मुञ्चति । पुण्यान्यर्जति । चौराः मुषन्ति । नरो ग्लायति । शिवम् ध्यायामि । गृहम् भरति । रामो वमति कंकालम् पश्यामि । नरो वमति ॥

संस्कृत बनाओ ।

मैं नाज भूनता हूं । कृष्ण उगलता है । कूंआ खोदता है । हाथी चबाते हैं । चोर पूर्वों को चोरता है । कृष्ण शर्मिन्दा होता है । कान फड़कता है । मृग जाता है । राम हंसता है । कौवे घुसते हैं ।

सायल (निवेदक) दुखी होता है । हम सब ईश्वर का ध्यान करते हैं। वे कूआं खोदते हैं। वह दरिद्रों को पालता है ॥

अकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दसूची।

अखिल=सब
अधमर्ण=ऋणी
अन्तःपुर=ज़नानखाना
अभ्युदय=ऐश्वर्य
अलङ्कार=ज़ेवर
अंशुधर=सूरज
आचार=चालचलन
आदर=इज़्ज़त
आदेश=हुक्म
आश्रम=निवासस्थान
उपदेश=शिक्षा
उपहार=इनाम
ओदन=भात
कट=चटाई
कंठ=गला
कपोल=गाल
क्रोध=गुस्सा
काल=समय
खञ्ज=लंगड़ा
खज=चमचा
जाल्म=निर्दय
तण्डुल=चावल
तृषित=प्यासा
दीप=दिया
देश=मुल्क
देह=शरीर
नायक=अग्रणी
नापित=नाई
पंक=कीचड़
पराक्रम=बहादुरी
परिणाम=नतीजा
पवन=हवा
प्रकाश=उजाला
प्रत्यय=विश्वास
प्रबल=मज़बूत
तारक=तारा

अकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्दसूची ।

अक्षर=हरूफ़
अज्ञान=मूर्खता
अध्ययन=पढ़ना
अभिधान=नाम
अश्रु (अस्र)=आंसू
आर=लोहशलाका
आलात=अंगारा
उद्यान=बगीचा
कपट=धोखा
कारण=सबब
कारागार=जेलख़ाना
कुसुम=फूल
खनित्र=कुदाल
खलन=लगाम
गीत=भजन
गुच्छक=गुच्छा
चक्र=पहिया

छत्र=छाता
तत्त्व=सार
तमर=सीसा, टिन
दिवस=दिन
दुर्ग=कठिनता
दुर्भिक्ष=अकाल
पण्य=विक्रेय द्रव्य
पात्र=बरतन
परिमाण=प्रमाण, पैमाना
भय=डर
रक्तबीज=रुपया
युद्ध=लड़ाई
रत्न=जवाहिर
राष्ट्र=देश
वृत्त=वृत्तान्त
संकट=दुःख
स्थान=जगह

४४—अकारान्त शब्दों से परे तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी और षष्ठी के एकवचन सम्बन्धी प्रत्यय

४४—टाङसिङसामिनात्स्याः ७।१।१२ अदन्ताट्टादीनामिनादयः भवन्ति ॥ ङेर्यः ७।१।१३ अतोऽङ्गात्परस्य ङेर्यादेशः भवति ॥ अतो भिस ऐस् ७।१।९ अदन्ताद् भिस् ऐस् स्यात् ॥

हों तो उन के स्थान में क्रमशः इन्, य, आत्, स्य आदेश होते हैं एवम् भिस् (तृतीया का बहुवचन) के स्थान में "ऐस्" हो जाता है ॥ यथाः—

ओदन+आ २८=ओदन+इन ४४=ओदनेन ३८
सूर्य+ए- सूर्य+ य- सूर्याय २७
रासभ+अस्- रासभ+आत्- रासभात् ३०
राम+अस्- राम+स्य- रामस्य ४४
सिंह+भिस्- सिंह+ऐस्- सिंहैः २८

४५—बहुवचन सम्बन्धी "भ्यस्" और "सु" प्रत्यय परे हों तो अदन्त अंग को एकार होजाता है।

यथा—राम+भ्यस्=रामे+भ्यस्—रामेभ्यः ॥

४६—चाहे समस्त स्वर, कवर्ग, पवर्ग, अन्तस्थ वर्ण, आ (उपसर्ग) और नुम् का अनुस्वार ये सब अलग २ अथवा यथासम्भव मिले हुए भी र वा ष वर्ण से परे हों तथा फिर उनसे परे प्रत्यय का अंगरूप अपदान्त नकार हो तो उस नकार को णकार होजाता है ॥

यथा—नर+आ (२८)—नर+इन (४४)—नरेन (३८)—नरेण इत्यादि ॥

४५—बहुवचने झल्येत् ७।३।१०३ झलादौ बहुवचने सुप्यतोऽङ्गस्यैकारः भवति ॥

४६—अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि ८।४।२ अट् कवर्ग पवर्गआङ्नुम् एतैर्व्यस्तैर्व्यवधानेऽपि रषाभ्यां परस्य नस्य णोभवति समानपदे ॥

४७ यदि " ओस् " (षष्ठी, सप्तमी का द्विवचन सम्बन्धी) प्रत्यय अकारान्त शब्द से परे हो तो उस अन्तिम अकार को एकार हो जाता है ॥

यथा -पण्डित(२८)+ओस्-पण्डिते(४७)+ओस्-पण्डित्+अय्(२५)+ओस्=पण्डितयोः । धन+ओस् (२८)-धने(४७)+ओस्-धन्+अय्(२५)+ओस्-धनयोः ॥

४८-मूल स्वरान्त शब्दों तथा नित्यस्त्रीलिंग-वाची दीर्घ स्वरान्त शब्दों से परे षष्ठी का "आम्" प्रत्यय हो तो इस " आम् " प्रत्यय से पूर्व "न्" का आगम होता है और इस " न् " से पूर्व का स्वर दीर्घ भी हो जाता है ॥

यथा-याचक+आम्-याचका+न्+आम्-याचकानाम्

४८ अकार को छोड़ स्वरान्त कवर्गान्त तथा अन्तस्थ वर्णों से परे यदि आदेश वा प्रत्यय का अंश-रूप दन्त्य सकार हो तो उस के स्थान में मूर्धन्य षकार हो जाता है ॥

यथा राम+सु-रामे ४५+सु-रामेषु ॥

४७-ओसि च ७ । ३ । १०४ ओसि परे अतोऽङ्गस्यैकारः भवति ॥

४८-ह्रस्वनद्यापो नुट् ७ । १ । ५४ ह्रस्वान्तान्नद्यन्तादाबन्ताच्चाङ्गात्परस्यामो नुडागमः भवति ॥ नामि ६ । ४ । ३ नामि परे अजन्ताङ्गस्य दीर्घो भवति ॥

४९-आदेशप्रत्यययोः ८ । ३ । ५९ इणकुभ्यां परस्यापदान्तस्यादेशः प्रत्ययावयवश्च यः सः मूर्धन्यादेशः भवति ॥

" राम " शब्द के शेष रूप ।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
तृतीया	रामेण	रामाभ्याम्	रामैः
	१ राम के द्वारा (से, ने)	२ रामों के द्वारा	बहुत से रामों से
चतुर्थी	रामाय	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
	१ राम के लिये,	२ रामों के लिये,	बहुत से रामों के लिये
पञ्चमी	रामात्	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
	१ राम से	२ रामों से	बहुत से रामों से
षष्ठी	रामस्य	रामयोः	रामाणाम्
	१ राम का	२ रामों का	बहुत से रामों का
सप्तमी	रामे	रामयोः	रामेषु
	१ राम में	२ रामों में	बहुत से रामों में

कारक एवम् विभक्तियों का प्रयोग ।

५०—क्रिया की सिद्धि में जो मुख्य साधन हो अर्थात् जिस के द्वारा कर्ता कार्य को सिद्ध करे उसे करणकारक कहते हैं ॥

५१—निम्नलिखित अर्थों में तृतीया विभक्ति होती है ॥

५०—साधकतमं करणम् १ । ४ । ४२ क्रियाप्रसिद्धौ यत प्रकृष्टोपकारकं करणसंज्ञकं भवति ॥

५१—कर्तृकरणयोस्तृतीया २ । ३ । १८ अनभिहिते कर्तरि करणे च तृतीया भवति ॥ हेतौ २ । ३ । २३ हेत्वर्थे तृतीया भवति ॥ येनाङ्गविकारः २ । ३ । २० येनाङ्गेन विकृतेन अंगिनो विकारोलक्ष्यते ततस्तृतीया भवति ॥ इत्थम्भूतलक्षणे

(क) अनुक्त कर्ता और करण में ॥

यथा-शिष्येण कृतम्=शिष्य ने किया । यहां शिष्य अनभिहित कर्ता है । " हस्तेन भारं नयति= हाथ से बोझ को लेजाता है " यहां पर " हस्तेन " पद करणकारक है, क्योंकि कर्ता हाथ के द्वारा अपने लेजाने के कार्य को सिद्ध कर रहा है ॥

(ख) हेत्वर्थ में अर्थात् जिस के होने में जो कारण हो उस अर्थ में ॥

यथा-धर्मेण सुखम्=धर्म से सुख । सत्येन यशः= सत्य से यश ॥

(ग) जिस अंग (अवयव) से शरीर का विकार प्रगट होता हो उस अवयव में ॥

यथा-नेत्रेण अन्धः=आंखों से अन्धा ॥

(घ) जिस लक्षण से जो पहिचाना जावे उस लक्षण में ॥

यथा-यज्ञोपवीतेन द्विजः-यज्ञोपवीत से द्विज। वेदाध्ययनेन विप्रः-वेदाध्ययन से विप्र ॥

(ङ) सह (साथ) वा इस के पर्यायवाची शब्दों से युक्त अप्रधान कर्ता में ॥

यथा-पुत्रेण सह जनकः गच्छति=पुत्र के साथ पिता जाता है ॥

---

२ । ३ । २१ कञ्चित्प्रकारं प्राप्तस्य लक्षणे तृतीया भवति। सहयुक्तेऽप्रधाने २ । ३ । १९ सहार्थेन युक्ते अप्रधाने तृतीया भवति ॥

५२-कर्ता जिस के निमित्त कर्म द्वारा क्रिया करे अर्थात् कर्म से जिस का उपकार वा उपयोग किया जाय उस को सम्प्रदान कारक कहते हैं, स्पृह धातु के उपयोग में जो ईप्सित (इष्ट) हो एवम् क्रोध द्रोह ईर्ष्या निन्दार्थक धातुओं के प्रयोग में जिन के प्रति कोप हो उसकी भी संप्रदान कारक संज्ञा होती है॥

५३ निम्नलिखित अर्थों में चतुर्थी विभक्ति होती है॥

(क) सम्प्रदान कारक में ॥

यथा-बालकाय मोदकान् मृगयति-लड़के के लिये लड्डू खोजता है ॥

(ख) जो पदार्थ जिस प्रयोजन के लिये होता है उस निमित्त को तादर्थ्य कहते हैं । तादर्थ्य में भी चतुर्थी विभक्ति होती है ॥

यथा-भूषणाय हिरण्यम्-ज़ेवर के लिये सोना ॥

(ग) उत्पात की सूचना में भी चतुर्थी विभक्ति होती है ॥

यथा-वाताय कपिला विद्युदातपायातिलोहिनी ।
पीता शस्यविनाशाय दुर्भिक्षाय सिता भवेत्॥

५२-कर्मणा यमभिप्रैति स संप्रदानम् १ । ४ । ३२ दानस्य कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानसंज्ञो भवति ॥ अनिराकरणात्कर्तुस्त्यागाङ्गं कर्मणेप्सितम् । प्रेरणानुमितिभ्यां वा लभते सम्प्रदानताम्॥ स्पृहेरीप्सितः १ । ४ । ३६ स्पृहेः प्रयोगे इष्टः सम्प्रदानसंज्ञो भवति ॥ क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः १ । ४ । ३७ स सम्प्रदानसंज्ञो भवति ॥

कपिलवर्ण की बिजली वायु के लिये, रक्त-वर्ण की धूप के लिये, पीतवर्ण की अन्नविनाश के लिये और सफ़ेद वर्ण की बिजली दुर्भिक्ष के लिये होती है ॥

५४-जो वियोग में निश्चल हो तथा भय किंवा रक्षार्थक क्रिया के प्रयोग में भय का हेतु हो, एवम् वारणार्थक धातुओं के प्रयोग में जो ईप्सित हो तथा छिपने में जिस के अदर्शन की इच्छा हो उस को अपादान कारक कहते हैं। इस कारक में पञ्चमी विभक्ति होती है ॥

यथा—वृक्षात्पतति=पेड़ से गिरता है ॥

५३-चतुर्थी सम्प्रदाने २।३।१३ सम्प्रदाने कारके चतुर्थी विभक्तिर्भवति ॥ चतुर्थीविधाने तादर्थ्यमुपसंख्यानम्, उत्पातेन ज्ञाप्यमाने ॥

५४-ध्रुवमपायेऽपादानम् १।४।२४ अपाये यद्ध्रुवं तत् कारकमपादानसंज्ञं भवति ॥ भीत्रार्थानां भयहेतुः १।४।२५ भयार्थानां त्राणार्थानां च प्रयोगे भयहेतुरपादानम्भवति ॥ वारणार्थानामीप्सितः १।४।२७ वारणार्थानां धातूनां प्रयोगे ईप्सितोऽर्थोऽपादानसंज्ञको भवति ॥ अपाये यदुदासीनं चलं वा यदि वाचलम् । ध्रुवमेवातदावेशात्तदपादानमुच्यते ॥ अन्तर्धौ येनादर्शनमिच्छति १।४।२८ अन्तर्धौ येनादर्शनमिच्छति तदप्यपादानं भवति ॥ अपादाने पञ्चमी २।३।२८ अपादाने कारके पञ्चमी विभक्तिर्भवति ॥

५५—कारक तथा प्रातिपदिक से अतिरिक्त स्वस्वामिभावादि सम्बन्ध को जतलाने वाला 'शेष' कहलाता है। हिन्दीभाषा में इस ही को सम्बन्ध कारक कहते हैं। इस में षष्ठी विभक्ति होती है:—

यथा:-नृपस्य कोशः=राजा का ख़ज़ाना ॥

५६-जो किसी का आधार हो उस को अधिकरण कहते हैं। अधिकरणकारक में सर्वदा सप्तमी विभक्ति होती है ॥

यथा—वनेषु सिंहाः वसन्ति-वन में शेर रहते हैं ॥

वाक्यों के उदाहरण।

युवकः हिरण्येन भूषयति=जवान ज़ेवर से सजाता है। तृषिताय जलम् नयामि=प्यासे के लिये पानी लेजाता हूं। अध्यापकः शिष्याय पुस्तकम् रचयति=अध्यापक शिष्य के लिये पुस्तक को बनाता है। खनित्रेण क्षेत्रम् खनति=कुदाल से खेत को खोदता है। उद्यानात् फलम् नयति=बगीचे से फल को लेजाता है। सिंहाय आमिषं नयति=शेर के लिये

५५-षष्ठी शेषे २।३।५० कर्मादिकारकेभ्योऽन्यः प्रातिपदिकार्थव्यतिरिक्तः स्वस्वामिभावादिसम्बन्धः शेषः तत्र षष्ठी भवति ॥

५६-आधारोऽधिकरणम् १।४।४५ कर्तृकर्मद्वारा तन्निष्ठक्रियाया आधारोऽधिकरणसंज्ञः भवति ॥ सप्तम्यधिकरणे च २।३।३६ अधिकरणे सप्तमी स्यात्। चकाराद्दूरान्तिकार्थेभ्यः ॥

मांस लेजाता है । उद्यानाय पंकजानि अर्जति (पंकजान्यर्जत्युद्यानाय)=बगीचे के लिये कमलों को इकट्ठा करता है । रामस्य पुस्तकम् पठामि=राम की पुस्तक को पढ़ता हूं । जले विशामः=हम पानी में घुसते हैं ॥

भाषा बनाओ ।

सिंहात् त्रस्यति । तृप्याम्यन्नेन । भृत्यो वृषाय तृणानि नयति । नरः पापेन त्रस्यति । भिक्षुकायान्नम् मृगयासि । बालकाः मोदकेन तृप्यन्ति । अध्ययनाय पुस्तकमर्जामि । अन्नेन कठोराः तृप्यन्ति । रचयत्यश्वाय खलीनम् । तण्डुलान्योदनाय भवन्ति । नृपः युद्धाय दुर्गम् रचयति । भयेन पृच्छति । अध्ययनेन कालम् नयन्त्यनूचानाः। जलेन वस्त्रम् द्रवति । कृष्णः संकटे धनम् याचति। चौराः कारागारे व्रजन्ति। अपूपाय कटाहम् नयसि । रामाय गृहम् स्पृहयति । क्षेत्रेऽन्नम्भवति। वानरान् वने मुञ्चामि। नखेन वृश्चति॥

संस्कृत बनाओ।

कांटों मे दुःख होता है । खेत में नाज होता है । नौकर पहिया लेजाता है । दुःख में धर्म रक्षा करता है ॥

परस्मैपदी क्रिया * ।

भ्वादिगणीय धातु	चुरादिगणीय धातु
णिदि=निन्दा करना	शुठ=सुखाना

* धातूनां संस्कृतपाठः—णिदि कुत्सायाम् । टुनदि समृद्धौ । कदि क्रदि क्लदि आह्वाने रोदने च । तकि कृच्छ्रजीवने ।

नदि=आनन्द करना
कदि,क्रदि-पुकारना,चिल्लाना
तकि=कठिनता से जीवन व्यतीत करना
चुबि-चूमना
बिदि,भिदि=टुकड़े करना
वाछि-चाहना
गुजि=गूंजना
काक्षि,वाक्षि,माक्षि-चाहना

मडि=सजाना
क्षपि-सहना,क्षमाकरना
चिति-सोचना,स्मरण करना

तुदादिगणीय धातु
कृती-काटना

५७-जो सोपधा इकारान्त धातु हैं उन के अन्तिम इकार का लोप होकर उपधा में 'न्' का आगम होता है॥

५८-अपदान्त न वा म से आगे अन्तस्थ वर्णों को छोड़ यदि कोई अन्य व्यञ्जन हो तो उक्त न वा म को अनुस्वार होजाता है॥

चुबि वक्त्रसंयोगे। बिदि भिदि अवयवे। वाछि इच्छायाम्। गुजि अव्यक्ते शब्दे। काक्षि वाक्षि माक्षि कांक्षायाम्। शुठि शोषणे। मडि भूषायाम् हर्षे च। क्षपि क्षान्त्याम्। चिति स्मृत्याम्। कृती छेदने॥

५७-इदितो नुम् धातोः ७।१।५८॥ इदितो धातोः नुमागमः भवति॥

५८-नश्चापदान्तस्य झलि ८।३।२४॥ नस्य मस्य चापदान्तस्य झलि अनुस्वारो भवति॥

५८-ऊष्म वर्णों को छोड़ चाहे कोई भी व्यञ्जन अनुस्वार से परे हो तो उस अनुस्वार के आगे का अक्षर जिस वर्ग का है उस वर्ग का पांचवा अक्षर उस अनुस्वार के स्थान में हो जाता है । यह नियम अपदान्त में तो सर्वदा और पदान्त में विकल्प से (प्रयोक्ता की इच्छानुसार) प्रयुक्त होता है ॥

यथा–नदि+ति–न+न्(५७)द+अ+ति–नन्दति । चुबि+तः–चु+न्(५७)+ब्+तः=चु+ँ(५८)+ब्+अ+त–चु+म्+ब+तः–चुम्बतः ॥

भ्वादिगणीय "निदि" धातु के रूप ।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमपुरुष	निन्दति वह निन्दा करता है	निन्दतः वे २ निन्दा करते हैं	निन्दन्ति वे सब निन्दाकरतेहैं
मध्यमपुरुष	निन्दसि तुम निन्दा करते हो	निन्दथः तुम २ निन्दा करतेहो	निन्दथ तुमसबनिन्दाकरतेहो
उत्तमपुरुष	निन्दामि मैं निन्दा करता हूं	निन्दावः हम २ निन्दा करते हैं	निन्दामः हमसबनिन्दाकरतेहैं

चुरादिगणीय " मडि " धातु के रूप ।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमपुरुष	मण्डयति वह सजाता है	मण्डयतः वे दो सजाते हैं	मण्डयन्ति वे सब सजाते हैं

५८–अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः ८ । ४ । ५८ ययि परे अपदान्तस्यानुस्वारस्य परसवर्णो भवति ॥ वा पदान्तस्य ८ । ४ । ५९पदान्तस्यानुस्वारस्य ययि परे परसवर्णो वा भवति॥

मध्यमपुरुष	मण्डयसि	मण्डयथः	मण्डयथ
	तुम सजाते हो	तुम२ सजाते हो	तुम सब सजाते हो
उत्तमपुरुष	मण्डयामि	मण्डयावः	मण्डयामः
	मैं सजाता हूं	हम२ सजाते हैं	हम सब सजाते हैं

वाक्यों के उदाहरण।

विप्रः शिवम् चिन्तयति–ब्राह्मण ईश्वर का स्मरण करता है। शिष्योऽक्षराणि मण्डयति–शिष्य अक्षरों को सजाता है। सूपः जलम् शुण्ठयति–रसोइया पानी को सुखाता है। खजेनौदनम् कृन्तति–चमचे से भात को काटता है। रामः कृष्णम् कथयति–राम कृष्ण को कहता है॥

भाषा बनाओ।

कठेराः चिन्तयन्ति। हिरण्येन पुत्रम् मण्डयामि। बालकायापूपान् वाञ्छामि। सुतम् चुम्बति। कण्टकान् भिन्द्मः। मूर्खाः निन्दन्ति। पुण्येन नन्दति। भिक्षुकाः छागम् वाञ्छन्ति। भृत्यायैणम् कांक्षामि। कठेराः क्रन्दन्ति। नापितः क्षुरति। नृपः युद्धे पराक्रमेण रत्नानि वाञ्छति। शिष्यः पुस्तकेनेतिहासम् पठति। अभ्युदयायोपकारं विधति। वने भृंगाः गुञ्जन्ति। अनूचानाः तुष्यन्ति॥

संस्कृत बनाओ।

पाठ याद करता हूं। तुम पुस्तक चाहते हो। वह चिल्लाता है। कृष्ण को चूमता है। नायक पुण्य के लिये पुकारता है। दुःख सहता हूं। अध्यापक

शिष्य के कसूर को क्षमा करता है । दरिद्र अकाल में अन्न की चिन्ता करते हैं । राजा के गृह को रत्न सजाते हैं । फूलों के गुच्छों को चाहता हूं । कव्वे कांव२(कोलाहल)करते हैं । नाई नाखूनों को काटता है । कीचड़ में कमल होते हैं । बुड्ढे में विश्वास होता है । लड़का उजाले में लिखता है । दरिद्र कठिनता से जीवन व्यतीत करते हैं । राजा राष्ट्र की रक्षा करता है । शरीर में रोग होते हैं । नौकर छाता लेजाता है । वन में फूल होते हैं ॥

इकारान्तपुल्लिङ्गशब्दसूची	उकारान्तपुं०शब्दसूची
अग्नि–आग	अंशु–किरण
अतिथि–मेहमान	अदित्सु–कृपण
अब्धि–समुद्र	अन्धु–कुआं
अराति–शत्रु	कच्छु–खुजली
अलि भौंरा	कम्बु–गला
ऋषि महात्मा	गुरु–अध्यापक
कपि–बन्दर	गोमायु–शृगाल
कृमि=कीड़ा	चरु=होमद्रव्य
काकारि=उल्लू	तितिक्षु=क्षमाशील
कवि=शाइर	दमथ, दमथु=सजा
तरवारि=तलवार	दिष्णु=दाता
गिरि=पहाड़	भानु=सूर्य
हरि=किसी का नाम	पशु=जानवर

अञ्जालि=रंडवा	अपटु=मूर्ख
अद्रि=पहाड़	साधु=महात्मा
ग्रन्थि=गांठ	अणुरेणु=धूलिकण
घननाभि=धूआं	परासु=मरा हुआ

६०-मूलस्वरान्त शब्दों से परे प्रथमा और द्वितीया के द्विवचन एवम् बहुवचन सम्बन्धी 'औ' और 'अस्' प्रत्यय हों तो पूर्व स्वर को ही दीर्घ हो जाता है। अभिप्राय यह है कि प्रथमा, द्वितीया के उक्त प्रत्यय जब मूल स्वरों से परे रहते हैं, तो उन प्रत्ययों के स्थान में केवल शब्दान्त स्वर ही दीर्घ होते हैं। दीर्घ होने के पश्चात् प्रत्ययस्थ स्वर का लोप होजाता है॥

यथा-कवि+औ=कवी । साधु+औ=साधू ।

दीर्घ स्वरान्त शब्दों में केवल द्वितीया के बहुवचन सम्बन्धी "अस्" प्रत्यय के ही परे रहने पर पूर्वसवर्ण दीर्घादेश नहीं होता है और ह्रस्वान्त अंग से प्रथमा विभक्ति का "अस्" प्रत्यय परे रहने पर अगला नियम प्रयुक्त होता है॥

६०—प्रथमयोः पूर्वसवर्णः (३२)॥ दीर्घाज्जसि च ६।१।१०५ दीर्घाज्जसि इचि च परतः पूर्वसवर्णदीर्घादेशो न भवति॥ नादिचि ६।१।१०४ आदिचि पूर्वसवर्णदीर्घो न भवति॥

६१-अकार को छोड़ अन्य ह्रस्व स्वरों से प्रथमा के बहुवचन का " अस् " प्रत्यय परे हो तो उक्त ह्रस्व अंग को तुल्यतम गुणादेश हो जाता है॥

यथा-कवि+अस्=कवे+अस्=कवयः॥

६२-स्त्रीलिङ्ग को छोड़ ह्रस्व इकारान्त, उकारान्त स्वर से परे तृतीया के एक वचन का " आ " हो तो उक्त ' आ ' के स्थान में " ना " हो जाता है और सर्वत्र इकारान्त, उकारान्त अंग से चतुर्थी पञ्चमी, षष्ठी के एकवचन सम्बन्धी प्रत्यय परे हों तो ह्रस्वान्त अंग को गुणादेश होजाता है॥

यथा-अग्नि+आ=अग्निना। कवि+ए=कवे+ए=कवये॥

६३-जब ए, ओ से परे पञ्चमी, षष्ठी का "अस्" प्रत्यय होता है तो उक्त "अस्" प्रत्यय का अकार पूर्व स्वर में मिल जाता है॥

यथा-हरि+(२८)अस्=हरे(६२)+अस्=हरेः (२४)

६१-जसि च ७।३।१०९ जसि परे ह्रस्वान्तस्याङ्गस्य गुणो भवति॥

६२-आङो नाऽस्त्रियाम् ७।३।१२० घेः परस्य आङो ना भवति स्त्रीलिङ्गं विहाय। आङिति टा संज्ञा प्राचाम्॥ घेर्ङिति ७।३।१११ घिसंज्ञकस्य ङिति सुपि परे गुणो भवति॥

६३-ङसिङसोश्च ६।१।११० एङो ङसिङसोरति परे पूर्वरूपमेकादेशो भवति॥

६४-ह्रस्व इकारान्त, उकारान्त शब्द से सप्तमी का 'इ' प्रत्यय परे हो तो अंग को अकार आदेश होता है और 'इ' प्रत्यय के स्थान में 'औ' आदेश हो जाता है ॥

यथा-हरि+इ = हर+औ = हरौ । साधु+इ = साध+औ = साधौ ॥

६५-यहां पर 'अस्' आदि विभक्तियों में जो २ कार्य कहा गया वे सब वेदों में विकल्प से होते हैं ॥

यथा-अग्नि+अस्=अग्नयः, अग्न्यः । शतक्रतवः, शतक्रत्वः । पश्वे, पशवे. इत्यादि

ह्रस्व इकारान्त "हरि" शब्द के रूप।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	हरिः १ हरि	हरी २ हरि	हरयः बहुत से हरि
द्वितीया	हरिम् १ हरि को	हरी २ हरियों को	हरीन् बहुतसे हरियों को
तृतीया	हरिणा १ हरि से	हरिभ्याम् २ हरियों से	हरिभिः बहुतसे हरियों से

६४-अच्च घेः ७ । ३ । ११९ इदुद्भ्यामुत्तरस्य ङेरौत् स्यात् घेरन्तादेशश्चाकारः ॥

६५-जसादिषु छन्दसि वावचनं प्राङ्णौ चङ्युपधायाः ह्रस्व इत्येतस्मात् ॥

चतुर्थी	हरये	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
	१ हरि के लिये	२ हरि के लिये	बहुतसे हरियोंके लिये
पञ्चमी	हरेः	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
	१ हरि से	२ हरियों से	बहुत से हरियों से
षष्ठी	हरेः	हर्योः	हरीणाम्
	१ हरि का	२ हरियों का	बहुत से हरियों का
सप्तमी	हरौ	हर्योः	हरिषु
	१ हरि में	२ हरियों में	बहुत से हरियों में

ह्रस्व उकारान्त " साधु " शब्द के रूप।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	साधुः	साधू	साधवः
	१ साधु	२ साधु	बहुत से साधु
द्वितीया	साधुम्	साधू	साधून्
	१ साधु को	२ साधुओं को	बहुतसे साधुओं को
तृतीया	साधुना	साधूभ्याम्	साधुभिः
	१ साधु से	२ साधुओं से	बहुत से साधुओं से
चतुर्थी	साधवे	साधुभ्याम्	साधुभ्यः
	१ साधु के लिये	२ साधुओं के लिये	बहुतसे साधुओं के लिये
पञ्चमी	साधोः	साधुभ्याम्	साधुभ्यः
	१ साधु से	२ साधुओं से	बहुतसे साधुओं से
षष्ठी	साधोः	साध्वोः	साधूनाम्
	१ साधु का	२ साधुओं का	बहुतसे साधुओं का
सप्तमी	साधौ	साध्वोः	साधुषु
	१ साधु में	२ साधुओं में	बहुतसे साधुओं में

वाक्यों के उदाहरण।

अग्निना दहति=आग से जलता है। तितिक्षुः क्षाम्यति=सहनशील सहता है। चरुम् वाञ्छामि=होमद्रव्य को चाहता हूं। दित्सुः भिक्षुकायान्नम् मृगयति=दाता भिखारियों के लिये अन्न को ढूंढता है। कच्छ्वोः अदगम् कांक्षामि=खुजली की दवा चाहता हूं। हरिः घननाभिना तुभ्यति=हरि धूएं से दुखित होता है। नृपः चौरं कारागारे विधति=राजा चोर को जेल में विधान करता है। शिष्यः गुरवे-उन्धोर्जलम् नयति=शिष्य गुरु के लिये कूएं से जल लेजाता है। अदित्सुर्धनमर्जति=कंजूस धन को जमा करता है। भानोरंशवः प्रथयन्ति=सूर्य की किरणें फैलती हैं। युद्धाय तरवारिम् कांक्षामि=युद्ध के निमित्त तलवार को चाहता हूं॥

भाषा बनाओ।

काकारयः क्रन्दन्ति। गोमायू क्रन्दतः। गिरिम् खनामि। नायकः पुष्पं स्पृशति। गुञ्जन्त्यलयः। ग्रन्थिम् कृन्तावः। आतुरः एजति। कवये रत्नानि नयति। अद्री पङ्कजानि भवन्ति। ऋषय उपकाराय पशून् रक्षन्ति। अरातये तरवारिम् कांक्षामि। ऋषयः पापाद् ग्लायन्ति। अदित्सोर्धनानि नश्यन्ति। हरिः तरवारिं स्पृहयति। अजानये क्रुध्यामि। अब्धौ पत-

नृगुच्याः। अग्निना वनम् दहति। अतिथयः उत्सवे व्रजन्ति। कम्बुम् मण्डयामि। हरिर्गीसायोः नश्यति।

संस्कृत बनाओ।

महात्मा जाते हैं। दाता धन को इकट्ठा करते हैं। रसोइया पूओं को बनाता है। कौवे को देखता हूं। धूआं होता है। पहाड़ों को देखता हूं। महात्मा प्रसन्न होते हैं। लड़ाई के लिये तलवार लेजाते हैं। ऋषिलोग निवासस्थान में जाते हैं। शायर गीतों को बनाते हैं। पहाड़ों में महात्मा रहते हैं। भंवर गूंजते हैं। वानर कोलाहल करते हैं। राजा चोरों से द्रोह करता है। हम शत्रुओं से जीतते हैं। आंख फड़कती है। धूएं से आसूं गिरते हैं॥

* भ्वादिगणीय आत्मनेपदी धातु।

एध=बढ़ना	ईक्ष=देखना
भाष=कहना	रमु=खेलना
श्लाघ्=प्रशंसा करना	षह=सहना

* धातूनां संस्कृतपाठः—एध वृद्धौ। ईक्ष दर्शने। भाष व्यक्तायां वाचि। रमु क्रीडायाम्। श्लाघृ कत्थने। षह मर्षणे चेष्ट चेष्टायाम्। भिक्ष भिक्षायामलाभे लाभे च। दध धारणे। स्वाद आस्वादने। यती प्रयत्ने। वेष्ट वेष्टने। भासृ दीप्तौ। स्फुट विकसने। वदि अभिवादनस्तुत्योः। स्पदि किञ्चिच्चलने। स्कुदि आप्रवणे। क्रदि परिदेवने। लघि भोजननिवृत्तावपि। भडि परिभाषणे। तुडि तोडने। व्यथ भयसंचलनयोः॥

चेष्ट=चेष्टा करना	भिक्ष=मांगना
दध=धारण करना	स्वाद=चखना
यत्=कोशिश करना	वेष्ट=लपेटना
भास्=प्रकाशित करना	स्फुट=खिलना
वदि=प्रणाम, स्तुति करना	स्पदि=मन्द२चलना
स्कुदि=कूदना	क्लिदि=दुखी होना
लघि=चलना,भूखा रहना	भण्डि=बक २ करना
तुण्डि=तोड़ना	व्यथ=डरना

६६—भ्वादिगणीय 'अ' विकरण से परे यदि आकारादि प्रत्यय (ऐसा प्रत्यय जिस के आदि में आकार है) हो तो उस प्रत्यय के आकार के स्थान में "इ" हो जाता है ॥

यथा—एध्+अ+आते=एध्+अ+इते=एधेते ॥

"एध्" धातु के रूप (वर्त्तमान काल में)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	एधते वह बढ़ता है	एधेते वे २ बढ़ते हैं	एधन्ते वे सब बढ़ते हैं
म० पु०	एधसे तुम बढ़ते हो	एधेथे तुम २ बढ़ते हो	एधध्वे तुम सब बढ़तेहो
उ० पु०	एधे मैं बढ़ता हूं	एधावहे हम २ बढ़ते हैं	एधामहे हम सब बढ़ते हैं

६६—सार्वधातुकमपित् १। २। ४ अपित्सार्वधातुकं ङिद्वत् भवति ॥ आतो ङितः ७।२।८१ अतः परस्य ङितामाकारस्य "इय्" भवति ॥

वाक्यों के उदाहरण।

भानुर्भासते=सूर्य प्रकाशित होता है। गुरवो यतन्ते=गुरु यत्न करते हैं। बालकाः रमन्ते=बालक खेलते हैं। मोदकान्स्वादन्तेऽध्यापकाः=पण्डित लड्डुओं को चखते हैं। वस्त्राणि दधामहे=हम सब वस्त्रों को धारण करते हैं। भिक्षुकौ भिक्षेते=दो भिखारी भीख मांगते हैं। अनूचानाः भाषन्ते=विद्वान् कहते हैं। भृत्याः भारम् सहन्ते-नौकर बोझ को सहते हैं। उपकारेण श्लाघसे-तू उपकार से प्रशंसा करता है। हरिर्भण्डते-हरि बहुत बोलता है। हरे भण्डसे-हे हरे! तुम अधिक बोलते हो। गुरुम् वन्दसे -तुम गुरु को प्रणाम करते हो॥

भाषा बनाओ।

कठेराः क्लिन्दन्ते। बालकौ रमेते। अदितयः लङ्घन्ते। भिक्षुकाः दिष्णुभ्यः वन्दन्ते। नटाः भण्डन्ते। आतुराः क्लिन्दन्ते। अध्यापकः भाषते। बालकाः स्कुन्दन्ते। आतुरः लंघते। रामः व्ययते। कृष्णः चेष्टते। रामम् श्लाघते॥

संस्कृत बनाओ।

नौकर तोड़ता है। तुम वस्त्र धारण करते हो। तुम कूदते हो। मोतबिर देखते हैं। फूल खिलते हैं। तारे प्रकाशित होते हैं। तुम सब अन्न मांगते हो। दरिद्र प्रणाम करते हैं। चोर डरते हैं। मैं दुःख सहता हूं॥

स्त्रीलिङ्गवाची आकारान्त शब्दसूची ।

कन्या लड़की	लता-बेल
प्रजा-रैयत	मेधा-बुद्धि
अजा-बकरी	इज्या-यज्ञ
इत्या-पालकी	ईर्ष्या-हसद, डाह
ईहा इच्छा	कपर्दिका-कौड़ी
उपचर्या सेवा	उपदा-भेंट
एडका-भेड़ी	एला-इलायची
कथा-कहानी	कालिका-प्रतिमास का देय ब्याज
गुटिका-गोली	गोत्रा, क्ष्मा-ज़मीन
मृत्तिका-मिट्टी	कूरिका-बांझ गौ
छुरिका-छुरी	ज्योत्स्ना-चांदनी रात
जाया-स्त्री	दक्षिणा-फ़ीस
तमिस्रा-अंधेरी रात	

६७-हलन्त शब्दों से परे और स्त्रीलिङ्गवाची आकारान्त, ईकारान्त शब्दों से परे प्रथमा के "स्" प्रत्यय का लोप हो जाता है ॥

यथा—कन्या+स्=कन्या ॥

६७—अपृक्त एकाल्प्रत्ययः १।२।४१ एकाल्प्रत्ययो यः सोऽपृक्तसंज्ञको भवति ॥ हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल् ६।१।६८ हलन्तात्परं दीर्घौ यौ ङ्यापौ तदन्ताच्च परं सुतिसीत्येतदपृक्तं हल् लुप्यते ॥

६८-स्त्रीलिङ्गवाची आकारान्त शब्दों से परे प्रथमा, द्वितीया का " औ " प्रत्यय हो तो उस प्रत्यय के स्थान में " इ " हो जाता है। तृतीया का " आ " प्रत्यय वा षष्ठी, सप्तमी का 'ओस्' प्रत्यय हो तो स्त्रीलिंग वाची आकारान्त अंग को एकारादेश हो जाता है। एवम् चतुर्थी से लेकर सप्तमी पर्यन्त के एकवचन सम्बन्धी प्रत्यय परे हों तो उन प्रत्ययों के पूर्व "या" का आगम होता है॥

यथा-कन्या+औ=कन्या+इ=कन्ये। कन्या+आ= कन्ये+आ=कन्यया। कन्या+ओस्=कन्ये+ओस्= कन्ययोः। कन्या+ए=कन्या+या+ए=कन्यायै। कन्या+ अस्=कन्या+या+अस्=कन्यायाः॥

६९-स्त्रीलिंग वाची ह्रस्व वा दीर्घ स्वरान्त शब्दों से तथा पुल्लिंग में केवल 'नी' शब्द से परे सप्तमी का एकवचन सम्बन्धी " इ " प्रत्यय परे हो तो उस के स्थान में " आम् " आदेश होता है॥

६८-औङ आपः ७।१।१८ आबन्तादङ्गात्परस्य औङः शी स्यात्। औङित्यौकारविभक्तेः संज्ञा॥ आङि चापः ७।३।१०५ आङि ओसि च परे आबन्ताङ्गस्य एकारो भवति॥ याडापः ७।३।११३ आपः परस्यङिद्वचनस्य याडागमो भवति॥

६९ ङेराम्नद्याम्नीभ्यः ७।३।११६ नद्यन्तादाबन्तात्-नीशब्दाच्च ङेराम् भवति॥ इदुद्भ्याम् ७।३।११७ इदु-द्भ्यान्नदीसंज्ञकाभ्याम् परस्य ङेरामादेशो भवति॥

यथा-कन्या+(२१) इ=कन्या+(६८) या+इ=कन्या+या+आम्=कन्यायाम् ॥

आकारान्त "लता" शब्द।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	लता एक बेल	लते २ बेल	लताः बहुतसी बेल
द्वितीया	लताम् १ बेल को	लते २ बेलों को	लताः बहुतसी बेलों को
तृतीया	लतया १ बेलो से	लताभ्याम् २ बेलों से	लताभिः बहुतसी बेलों से
चतुर्थी	लतायै १ बेल के लिये	लताभ्याम् २ बेलों के लिये	लताभ्यः बहुतसी बेलों के लिये
पञ्चमी	लतायाः १ बेल से	लताभ्याम् २ बेलों से	लताभ्यः बहुतसी बेलों से
षष्ठी	लतायाः १ बेल का	लतयोः २ बेलों का	लतानाम् बहुतसी बेलों का
सप्तमी	लतायाम् १ बेल में	लतयोः २ बेलों में	लतासु बहुतसी बेलों में

वाक्यों के उदाहरण।

कन्या वाञ्छति-लड़की चाहती है। कपर्दिकाम् भिक्षन्ते भिक्षुकाः-भिखारी कौड़ियों को मांगते हैं। मृत्तिकया पात्राणि रचयति-मिट्टी से बर्तन बनाता है। कन्यायै इत्याम् नयामि=लड़की के लिये पालकी लेजाता हूं। मृत्तिकायै खनित्रेण क्ष्माम् खनति-मिट्टी के लिये कुदाल से पृथिवी को

खोदता है। छूरिका खलम् खादति=बांझ गौ खल खाती है। अध्यापकायोपदाम् नयामि=अध्यापक के लिये भेंट को लेजाता हूं। हरिस्तमिस्रायां व्रजति=हरि अंधेरीरात में जाता है। अधमर्णः कालिकाम् नयति-कर्ज़दार माहवारी ब्याज को लेजाता है॥

भाषा बनाओ।

मेधायै यतन्तेऽनूचानाः। कृषकाः अजाम् नयन्ति। जाया कथाम् कथयति। आतुराय गुटिकाम् रचयामि। हिरण्यागेहा भवति अक्षित्सोः। इज्यायै चरुम् नयामि। ज्योत्स्नायाम् पठति शिष्यः॥

संस्कृत बनाओ।

इलायची लाता हूं। भेड़ जाती है। पण्डित लोग कहानी बनाते हैं। रैयत का उपकार राजे लोग करते हैं। ईश्वर को प्रणाम करता हूं। ब्राह्मण के लिये यज्ञ की फ़ीस लेजाता हूं॥

७०-जो तीनों लिंगों की सब विभक्तियों में सब वचनों में एक से रहते हैं, अर्थात् जिन में किसी प्रकार से रूपभेद नहीं होने पाता उन को अव्यय कहते हैं॥

७०-सदृशं त्रिषु लिंगेषु सर्वासु च विभक्तिषु।
वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम्॥
स्वरादिनिपातमव्ययम् १।१।३७ स्वरादयो निपाताश्च अव्ययसंज्ञकानि भवन्ति॥

अव्ययसूची ।

अथ—अब, वा	अधुना—अब
अति—बहुत, देर	अधः—नीचे
अतीव—बहुत	अ=अभाव
अलम्—ज़ेवर, शक्ति, काफ़ी, बस	अस्तु—ख़ैर, हो
	आशु—शीघ्र
अग्रतः, अग्रे—आगे तक, आगे	आरात्—दूर, नज़दीक
	इव समान
अनु—पीछे, तुल्य, हिस्सा	इदानीम्—अब
अञ्जसा, अन्हाय—शीघ्र, साक्षात्	ईषत्—कुछ
	उच्चैः ऊंचा
अवश्यम्—ज़रूर	ऊर्ध्वम्—ऊपर
अद्य—आज	ऋते—विना
अपरेद्युः, अन्येद्युः, अधरेद्युः—दूसरे दिन	एवम्—ऐसा, ऐसा ही
	एकदा—एकवार
	कु—बुरा
अपि भी, तौभी	किञ्चित्—कुछ
पश्चात्—पीछे	कदाचित् कभी
प्रायः—बहुधा	किम्—क्या
प्रातः, प्रगे—सबेरे	बहिः—बाहर
भोः—हे, ऐ	गुलुगुधा—कष्ट, खेलना
चिरम्, चिरेण, चिरात्, चिराय—देर, देरसे	च—और, भी
	जातु—कभी भी
झटिति—जल्दी	तूष्णीम्—चुप

तथा-और	तदा, तदानीम् -- तब
तावत्-तब तक	
द्राक्-जल्दी	नहि, ना, नो, नेत् -नहीं
नक्तम्-रात	दिवा-दिनमें, दिनकेसमय
नीचैः--नीचे	नमस्-प्रणाम
पृथक् अलग	नोचेत्, नचेत्, नकिर--नहीं तो, न हुआ तो
पुनः-फिर, पीछे	
मुहुः फिर, बारम्बार	मनाक्-थोड़ा
मा, मास्म, मो, माकिम् -मत	यतः-क्योंकि, जिस से
	यत्-जोकि, जो
यावत्-जबतक, जहां तक	यथार्थम्, यथावत् -ठीक
युगपत्=एक साथ, एक समय	विश्वतः, विश्वक् पूर्णतया, सब ओर से
वेलायाम्-समय में	सु-अच्छा
समुपजोषम्-आनन्द	श्वस् कल (आने वाला)
स्वस्ति-आशीष, मंगल क्षेम कुशल	सकृत्-एकबार, तुरन्त, सदा, साथ
साक्षात्-प्रत्यक्ष, सामने	सामि-आधा, छिः
सद्यः, सपदि -- जल्दी, झट तत्क्षण	साकम्, सार्धम्, समम्, सत्रा, सह -- साथ
साम्प्रतम्-इस समय, अब, तुरन्त	भूरि=बहुल

७१—किसी को चिताना सम्बोधन कहाता है। इस में भी प्रथमा विभक्ति के ही प्रत्यय युक्त होते हैं, परन्तु इतना विशेष है कि सम्बोधन के अर्थ को दिखलाने के निमित्त गुणान्त अंग से परे एकवचन सम्बन्धी " स् " प्रत्यय का लोप होजाता है और यदि रव इकारान्त, उकारान्त प्रातिपदिकों को सम्बोधनार्थ परिणत करना हो तो एकवचन सम्बन्धी अंग को गुणादेश होता है फिर अगले " स् " प्रत्यय का लोप हो जाता है ॥

यथा—राम+स्=राम। हरि+स्=हरे+स्=हरे। साधु+स्=साधो+स्=साधो ॥

कुछ शब्दों के सम्बोधन में रूप।

एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
राम	रामौ	रामाः
हे राम	हे २ रामो	हे बहुतसे रामो
कन्ये	कन्ये	कन्याः
हे लड़की	हे २ लड़कियो	हे ब० लड़कियो

७१—स्थितस्याभिमुखीभावमात्रं सम्बोधनं विदुः।
प्राप्ताभिमुख्यः पुरुषः क्रियासु विनियुज्यते ॥

एकवचनं सम्बुद्धिः २।३।४९ सम्बोधने प्रथमाया एकवचनं सम्बुद्धिसंज्ञं भवति ॥ एङ्ह्रस्वात्सम्बुद्धेः ६।१।६९ एङन्ताद्ध्रस्वान्ताच्चाङ्गाद्धल्लुप्यते सम्बुद्धिश्चेत् ॥ ह्रस्वस्य गुणः ७।३।१०८ ह्रस्वस्य गुणो भवति सम्बुद्धौ ॥ सम्बोधने च २।३।४७ सम्बोधने च प्रथमा विभक्तिर्भवति ॥

हरे	हरी	हरयः
हे हरि	हे २ हरियो	हे ब० हरियो
साधो	साधू	साधवः
हे साधु	हे २ साधुओ	हे ब० साधुओ

भाषा बनाओ ।

साम्प्रतम् पठन्ति बालकाः । सूपो वेलायाम् रचयत्योदनम् । पुत्रेण साकं पिता गच्छति । नराः यथावत् यतन्ते । शु व्रजति । अञ्जसा ईषत् लिखामि। विप्रो जातु नो याचति । अध्यापकाय नमः । कृष्णो झटिति व्रजति । रामकृष्णौ युगपत् रचयतः । अस्तु रामो वेष्टते । कठेराः किञ्चित् भिक्षन्ते। मुहुर्भण्डसि। अद्य नयामि गृहे । हरिरधुना वसति । राम ! किम् रचयसि । कृष्णः उच्चैः पठति । हरे ! पुत्र ! कदाचित् अगदम् नयसि । साधो ! सूपौदनम् रचयसि ॥

संस्कृत बनाओ ।

हे रामः ! कृष्ण पुत्र को सजाता है । मोतबिर ठीक लिखते हैं । एक साथ फलों और फूलों के गुच्छों को राम लेजाता है । बन्दर जल्दी जाते हैं। चोर अंधेरी रात में धनों को चुपचाप चोरते हैं। कृष्ण कपड़े को लपेटता है । विना हवनसामग्री के ठीक २ यज्ञ नहीं होता है । इस समय किसान खेत को जोतता है । वह कपड़े सुखाता है । बाहर दरिद्र कौड़ियां मांग रहे हैं । महात्मा उपदेश की

लिये शीघ्र जाते हैं। मनुष्य थोड़े पाप से भी लज्जित होता है। राम रात दिन ईश्वर की स्तुति करता है॥

* भ्वादिगणीयधातु	दिवादिगणीयधातु
लोक्-देखना	सू=उत्पन्न होना
तेव्, देव्-खेलना	री=चूना, टपकना
शिक्ष=शिक्षा देना	व्री=बरना, ग्रहणकरना
स्रम्भ्=विश्वास होना	पी=पीना
डी=उड़ना	दीप्=प्रकाशित होना
त्रै=पालना	मन=जानना, मानना
वह=पहुंचाना, ढोना, लेजाना	युज्=समाधि करना
	सृज्=बनाना
नद=गुनगुनाना	युध=लड़ना
सूद-झरना	ली=मिलना, मिलाना

७२-जो समय अब तक नहीं बीता है वा बीत रहा है, किन्तु आगे होगा अर्थात् आने वाले

* धातूनां संस्कृतपाठः-लोकृ दर्शने। तेवृ, देवृ देवने। शिक्ष विद्योपादाने। स्रम्भु विश्वासे। डीङ् विहायसा-गतौ। त्रैङ् पालने। वह प्रापणे। षूद क्षरणे। णद अव्यक्ते शब्दे। षूङ् प्राणिप्रसवे। रीङ् स्रवणे। व्रीङ् वृणोत्यर्थे। पीङ् पाने। दीपी दीप्तौ। मन ज्ञाने। युज समाधौ। सृज विसर्गे। युध सम्प्रहारे। लीङ् श्लेषणे॥

७२-लृट् शेषे च ३।३।१३ शेषे शुद्धेभविष्यत्तिकाले धातोर्लृट् भवति क्रियार्थायां क्रियायां सत्यामसत्यां वा॥

समय को " लृट् " अथवा भविष्यत् काल कहते हैं। यदि भविष्यत् काल के निमित्त किसी धातु के रूप बनाने हों तो " ति " आदि २१वें प्रक्रम में कहे प्रत्ययों से पूर्व ' स्य ' का आगम होता है ॥

७३-धातुओं में २१वें, २२वें प्रक्रम के अनुसार आये हुये प्रत्ययों के अतिरिक्त कोई ऐसा प्रत्यय, जिस के आदि में व्यञ्जनवर्ण हो, आवे तो उस प्रत्यय के पूर्व ' इ ' का आगम होता है ॥

यथा—वद्+इ+स्य+ति=वद्+इ+ष्य+ति=वदिष्यति । दध्+इ+स्य+ते=दध्+इ+ष्य+ते=दधिष्यते ॥

वाक्यों के उदाहरण ।

आप्ताः सत्यम् कथयिष्यन्ति=मोतबिर सत्य कहेंगे। ऋते ज्ञानान्न सुखम् भविष्यति=विना ज्ञान के सुख न होगा। नटाः नटिष्यन्ति=नट नाचेंगे। युवका वस्त्राणि दधिष्यन्ते=जवान वस्त्रों को धारण करेंगे। नापितः रामम् क्षुरिष्यति=नाई राम की हजामत बनावेगा। शिष्योऽध्यापकात् पाठम् पठिष्यति=शिष्य गुरु से पाठ पढ़ेगा ॥

स्यतासी लृलुटोः ३ । १ । ३३ लृलुटोः परतः धातोः स्यतासी प्रत्ययौ भवतः ॥

७३-आर्धधातुकं शेषः ३ । ४ । ११४ तिङ्शित्श्च विहाय अन्यः प्रत्ययः आर्धधातुकसंज्ञो भवति ॥ आर्धधातुकस्येड्वलादेः ७ । २ । ३५ वलादेरार्धधातुकस्येडागमो भवति ॥

भाषा बनाओ ।

रामः आम्रान् चूषिष्यति । बालकौ मोदकान् स्वादिष्येते । नृपोन्तःपुरे व्रजिष्यति । अधमर्णः कालिकाम् नेष्यति । दुर्भिक्षे नराः रात्रिन्दिवमन्नाय चिन्तयिष्यन्ति । तण्डुलैः ओदनम् पक्ष्यति । अध्यापको धनाय भण्डिष्यते । विप्राः शिवम् अर्चिष्यन्ति । बालको गोमायोः भेष्यति । वने कुसुमानि स्फुटिष्यन्ति । रामस्य क्षेत्रम् कृष्णः हलिष्यति । नराः पुण्येन नन्दिष्यन्ति । हरिः रज्जुम् वटिष्यति । कठेराः नद्यां क्रन्दिष्यन्ति । आमिषं काकाः लक्षयिष्यन्ति । एडका डयिष्यन्ते । अनूचानःप्रगेऽक्षराणि लिखिष्यति । तावत् बालकः पठिष्यति ॥

संस्कृत बनाओ ।

मैं ईश्वर की स्तुति करूंगा । वे कपड़ों को काटेंगे । मूर्खता से दुःख होगा । महात्मापुरुष अभ्युदय के लिये प्रयत्न करेंगे । नौकर छाता लेजावेगा । मधुमक्खी गूंजेंगी । मेहमान चमचों को ले जावेंगे ॥

स्त्रीलिङ्ग शब्दसूची ।

मति=बुद्धि	श्रुति=वेद
भूमि=ज़मीन	धूलि=धूल
मुक्ति=छुटकारा, नजात	धेनु=गाय
अङ्गु=अंगुली	अकपालि=धाय

युवति=जवान स्त्री	अलु=छोटी गागर
दृष्टि=यज्ञ	ऋष्टि=तलवार
कशा=चाबुक	कुतू=कुप्पा
गोधूलि=संध्याकाल	छिदि=कुल्हाड़ी
जाति=वर्ण, वंश	तमि=अंधेरी रात
समिति=सभा	घृत=घी (नपु०)

९४-स्त्रीलिङ्गवाची ह्रस्व वा दीर्घ इकारान्त शब्दों से परे चतुर्थी से षष्ठी पर्यन्त के एकवचन सम्बन्धी प्रत्यय परे हों तो उन प्रत्ययों के स्वरों के स्थान में कोई तुल्यतम वृद्धिसंज्ञक स्वर आदेश हो जाता है । अर्थात् प्रत्यय में " ए " हो तो उस के स्थान में "ऐ" और 'अ' हो तो उस के स्थान में 'आ' हो जाता है यह नियम स्त्रीलिंगवाची दीर्घ ईकारान्त ऊकारान्त में तो नित्य प्रयुक्त होता है, परन्तु स्त्री-लिंगवाची ह्रस्व इकारान्त और उकारान्त शब्दों में इस का प्रयोग करना न करना प्रयोक्ता की इच्छा पर निर्भर है ॥

यथा—मति+ए = मति+ऐ = मत्यै । धेनु+अस्= धेनु+आस्=धेन्वाः ॥

९४-ङिति ह्रस्वश्च १ । ४ । ६ इयङुवङ्स्थानौ स्त्री-शब्दभिन्नौ नित्यस्त्रीलिङ्गावीदूतौ ह्रस्वौ च इवर्णौ स्त्रियां वा नदीसंज्ञौ भवतः ङिति परे ॥ आण्नद्याः ७ । ३ । ११२ नद्यन्तादङ्गात्परेषां ङितामाडागमो भवति ॥ आटश्च ६ । १ । ९० आटोऽचि परे वृद्धिरेकादेशो भवति ॥

७५ यदि सकार तवर्ग का शकार चवर्ग के साथ योग हो तो क्रम से सकार तवर्ग के स्थान में शकार चकार हो जाता है ॥

यथा-रामस्+चिन्तयति=रामश्चिन्तयति ॥

७६-यदि त, द और न से परे ल हो तो त, द और न के स्थान में लकार हो जाता है ॥

यथा-भिक्षुकान्+लक्षयसि=भिक्षुकाल्लँक्षयसि ॥

७७-यदि किसी व्यञ्जनान्त शब्द से अनुनासिक वर्ण परे हो तो पूर्व व्यञ्जन के स्थान में तुल्यतम अनुनासिकवर्ण आदेश हो जाता है ॥

यथा-रामात्+नयति=रामान्नयति ॥

७८-मकारान्त पद से कोई व्यञ्जन वर्ण परे हो तो उस पदान्त " म् " के स्थान में अनुस्वार हो जाता है ॥

यथा-धनम्+त्यजति=धनं त्यजति ॥

ह्रस्व इकारान्त स्त्रीलिङ्ग "अङ्कपालि" शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अङ्कपालिः	अङ्कपाली	अङ्कपालयः

७५-स्तोः श्चुना श्चुः ८।४।४० सकारतवर्गयोः शकारचवर्गाभ्याम् योगे शकारचवर्गौ भवतः ॥

७६-तोर्लि ८।४।६० तवर्गस्य लकारे परे परसवर्णो भवति ॥

७७-यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा ८।४।४५ यरः पदान्तस्यानुनासिके परे अनुनासिको वा भवति ॥

	१ धाय	२ धाइयां	ब०धाइयां
द्वितीया	अङ्कपालिम्	अङ्कपाली	अङ्कपाली:
	१ धाय को	२ धाइयों को	ब०धाइयों को
तृतीया	अङ्कपाल्या	अङ्कपालिभ्याम्	अंकपालिभि:
	१ धाय से	२ धाइयों से	ब०धाइयों से
चतुर्थी	अंकपाल्यै अंकपालये	अंकपालिभ्याम्	अंकपालिभ्य:
		"	"
	१ धायकेलिये	२ धाइयोंकेलिये	ब०धाइयोंकेलिये
पञ्चमी	अंकपाल्या: अंकपाले:	अंकपालिभ्याम्	अंकपालिभ्य:
		"	"
	१ धाय से	२ धाइयों से	ब०धाइयों से
षष्ठी	अंकपाल्या: अंकपाले:	अंकपाल्यो:	अंकपालीनाम्
		"	"
	१ धाय का	२ धाइयों का	ब०धाइयों का
सप्तमी	अङ्कपाल्याम् अंकपालौ	अंकपाल्यो:	अंकपालिषु
		"	"
	१ धाय में	२ धाइयों में	ब०धाइयों में
सम्बोधन	अंकपाले	अंकपाली	अंकपालय:
	हे धाय	हे २ धाइयो	हे ब०धाइयो

उकारान्त " धेनु " शब्द।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	धेनु:	धेनू	धेनव:
	१ गाय	२ गाय	बहुतसी गाएं
द्वितीया	धेनुम्	धेनू	धेनू:

	१ गायको	२ गायोंको	ब० गायों को
तृतीया	धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभिः
	१ गाय से	२ गायों से	ब० गायों से
चतुर्थी	धेन्वै, धेनवे	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
		,,	,,
	१गायकेलिये	२गायोंकेलिये	ब०गायोंके लिये
पञ्चमी	धेन्वाः, धेनोः	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
	१ गाय से	२ गायों से	ब०गायों से
षष्ठी	धेन्वाः,धेनोः	धेन्वोः	धेनूनाम्
	१ गायको	२ गायोंको	ब० गायों को
सप्तमी	धेन्वाम्,धेनौ	धेन्वोः	धेनुषु
	१ गायमें	२ गायोंमें	ब० गायों में
सम्बोधन	धेनो	धेनू	धेनवः
	हे गाय	हे २ गाये।	हे ब० गाये।

भाषा बनाओ।

अनूचानो श्रुतिम् पठति। साधवो मुक्त्यै यतन्ते। भूमौ धूलिर्भवति। युवतयो पुष्पं नयन्ति। रामः छिद्या चक्रम् कृन्तति। कुसुमश्वाय नेष्यामि। भूम्याम् धेनवश्चरिष्यन्ति। अंकपालिः पृच्छति बालकान्। नायकः ऋष्टिना युद्धम् विधति। समित्याम् युवकः व्रजिष्यन्ति। घृताय कुसुमीक्षसे। अग्रवःस्फुरन्ति। गोधूल्यां बालकाः स्कुन्दिष्यन्ते। इष्ट्यै भूमिम् खनति। श्रुत्या धर्मम् वदिष्यन्ति विप्राः॥

संस्कृत बनाओ ।

सभाओं से उपकार होगा । लड़का छुरी से अंगुली को काटेगा । बृद्धों की जवान स्त्रियां नहीं होतीं । आजकल राजाओं के अनेक जवान स्त्रियां होती हैं । रात्रि में यज्ञ नहीं होता है । बुद्धिमान् बुद्धि से अन्नों को और रत्नों को इकट्ठा करेगा । नौकर सन्ध्याकाल में फूलों के गुच्छों को लेजावेगा । हम लोग छुटकारे के लिये प्रयत्न करेंगे । लड़के धूल से खेलते हैं । कल को नौकर बगीचे में छोटी गागरियों से पानी लेजावेंगे । जवान औरतें कमलों को चाहती हैं । मैं चाबुक चाहता हूं । वह तलवार से बकरे को सताता है । मैं भूमि के लिये सोचता हूं ॥

भ्वादिगणीय धातुसूची * ।

बुक्क=भौंकना (प०)	मा=तोलना (प० प०)
लोच्=देखना (आ०)	भृश्, भ्रंश्=गिरना
क्लेश=सताना	यस्=कोशिश करना
भ्यस=डरना	व्रीड=शरमाना
क्षुभ=घबड़ा जाना	भुस=तोड़ना

संज्ञासूची ।

कुक्कुरः (पु०)=कुत्ता तृण (न०)=तिनका

तृप्ति (स्त्री०)=सन्तोष

---

* धातूनां संस्कृतपाठः—बुक्क भाषणे । लोचृ दर्शने । क्लेश अव्यक्तायां वाचि बाधन इत्येके । भ्यस भये । क्षुभ सञ्चलने ॥

७८–जो आज न हुआ हो, किन्तु आज से पहिले हो चुका हो उसे अनद्यतन भूतकाल कहते हैं। यदि इस काल के निमित्त धातुओं के रूप बनाने हों तो धातु के पूर्व अकार का आगम होता है फिर धातु के आगे २१वें प्रक्रमानुसार जो 'ति' आदि प्रत्यय आते हैं उन में से जो इकारान्त प्रत्यय (ति, अन्ति, सि) हैं उन प्रत्ययों के अन्तिम इकार का लोप होजाता है। एवम् तस्, थस्, थ और मि इन ४ प्रत्ययों के स्थान में क्रम से ताम्, तम्, त और अम् आदेश होते हैं। यहां यह भी ध्यान रखना चाहिये कि स्वरादि धातुओं से पूर्व आकार का आगम होता है; फिर इस आकार और अगले स्वर के स्थान में कोई तुल्यतम वृद्धि का आदेश

माङ् माने। भृशु भ्रंशु अधःपतने। यसु प्रयत्ने। व्रीड लज्जायां चोदने च। भुस खण्डने॥

७९–अनद्यतने लङ् ३।२।१११ अनद्यतनभूतार्थवृत्तेर्धातोर्लङ् भवति॥ लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः ६।४।७१ एतेषु परेषु अङ्गस्याडागमो भवति सचोदात्तः॥ इतश्च ३।४।१०० ङितो लस्य परस्मैपदसम्बन्धिन इकारस्य नित्यं लोपो भवेत्॥ तस्थस्थमिपांतांतंतामः ३।४।१०१ ङितश्चतुर्णां तामादयः क्रमाद्भवन्ति॥ आडजादीनाम् ६।४।७२ अजादीनाम् धातूनामाडागमो भवति लुङादिषु परेषु॥ आटश्च ६।१।९० आटोऽचि परे वृद्धिरेकादेशो भवति॥ अलोन्त्यस्य १।१।५२ संयोगान्तस्य लोपः ८।२।२३ संयोगान्तं यत्पदं तदन्तस्य लोपो भवति॥

होजाता है । अनद्यतनभूत को व्याकरण शास्त्र में " लङ् " कहते हैं, अतः जब इस काल के निमित्त आत्मनेपदी धातुओं के रूप बनाने हों तो २१ वें प्रक्रम के कोष्ठान्तर के प्रत्ययों का प्रयोग करना होगा। परस्मैपदी धातु को इस काल में रूप देने पर 'अन्ति' के स्थान में ' अन् ' ही रह जाता है॥

अनद्यतनभूतकाल में पर० "भू" धातु के रूप।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	अभवत्	अभवताम्	अभवन्
	वह हुआ	वे दो हुए	वे सब हुए
म० पु०	अभवः	अभवतम्	अभवत
	तू हुआ	तुम २ हुए	तुम सब हुए
उ० पु०	अभवम्	अभवाव	अभवाम
	मैं हुआ	हम २ हुए	हम सब हुए

अनद्यतनभूतकाल में आ०प० "वेष्ट" धातु।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमपुरुष	अवेष्टत	अवेष्टेताम्	अवेष्टन्त
	उसने लपेटा	उन २ ने लपेटा	उन सबने ल०
मध्यमपुरुष	अवेष्टथाः	अवेष्टेथाम्	अवेष्टध्वम्
	तुमने लपेटा	तुम२ने लपेटा	तुमस०लपेटा
उत्तमपुरुष	अवेष्टे	अवेष्टावहि	अवेष्टामहि
	मैंने लपेटा	हम२ने लपेटा	हमस०लपेटा

" एध " धातु के रूप (आ०प०)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमपुरुष	ऐधत	ऐधेताम्	ऐधन्त
	वह बढ़ा	वे २ बढ़े	वे सब बढ़े
मध्यमपुरुष	ऐधथाः	ऐधेथाम्	ऐधध्वम्
	तू बढ़ा	तुम २ बढ़े	तुमसबबढ़े
उत्तमपुरुष	ऐधे	ऐधावहि	ऐधामहि
	मैं बढ़ा	हम २ बढ़े	हमसबबढ़े

८०—यदि वर्तमानकाल के रूपों में "स्म" उपपद जोड़ दिया जाय तो वह अनद्यतनभूतकाल का ही द्योतक हो जाता है॥

यथा—रामः अयोध्यायाम् वसति स्म=राम अयोध्या में रहता था॥

वाक्यों के उदाहरण।

घटाज्जलं रीयते स्म=घड़े से पानी टपका। अश्वः सलिलं अपीयत=घोड़े ने पानी पिया। साधुरयुज्यत=साधु ने योग किया। ईश्वरो लोकमसृजत्=ईश्वर ने लोक को रचा। नापितो माणवकं क्षुरति स्म=नाई ने बालक की हजामत की। गुरुं धर्मं पृच्छामि स्म=मैं गुरु से धर्म पूछता था॥

८०—लट् स्मे ३।२।११८ स्म शब्द उपपदे भूतानद्यतनपरोक्षार्थवृत्तेर्धातोर्लट् भवति॥ अपरोक्षे च ३।२।११९ अपरोक्षे च भूतानद्यतनार्थवृत्तेर्धातोः स्म उपपदे लट् भवति॥

भाषा बनाओ।

अहं छत्रं स्म दधे। भृत्यो रज्जुमसृजत्। सैनिकश्चौरमसुञ्चत्। अनूचानोऽलिखत् पुस्तकानि। मूर्खाः अद्रुह्यन्त पण्डितेभ्यः। भानुरदीप्यत। शिष्यो गुरवे दक्षिणां यच्छति स्म। कृष्णोऽर्जुनं गीतामकथयत्। अर्जुनो द्रोणाच्छिक्षते स्म। नेत्रे स्फुरतः स्म। स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते मनुजं भयात्॥

संस्कृत बनाओ।

कुमारिल भट्ट पण्डित था। चिड़िया उड़ी। फूल खिले थे। चोर घबराये। नदियां समुद्र में लीन हुईं। ज्ञानी ईश्वर में मिल गया। राम ने पिनाक तोड़ा। भृत्यों ने कपड़ा लपेटा। ब्राह्मणों ने लड्डू चखे। कछुआ मन्द २ चला। शशक कूदा और दौड़ा॥

८१—अम्बा वाचक शब्द और स्त्रीलिंगवाची ईकारान्त, ऊकारान्त शब्दों को यदि सम्बुद्धिसंज्ञक (सम्बोधन में) बनाने हों तो उन के अन्तिम स्वर को ह्रस्व होजाता है॥ यथा—हे अम्ब, हे नदि॥

स्त्रीलिंगवाची शब्दसूची।

नदी=दरिया	नारी–स्त्री
गौरी=किसी का नाम	पत्नी=भार्या
वाणी=शब्द, आवाज़	अम्बा=माता
श्वश्रू=सास	माता (मातृ)=मां
वधू=बहू	

८१—अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः ७। ३। १०७ अम्बार्थानां नद्यन्तानां च ह्रस्वो भवति सम्बुद्धौ॥

दीर्घ ईकारान्त " नदी " शब्द (स्त्रीलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	नदी	नद्यौ	नद्यः
	१ नदी	२ नदी	बहुतसी नदी
द्वितीया	नदीम्	नद्यौ	नदीः
	१ नदी को	२ नदियोंको	ब० नदियोंको
तृतीया	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः
	१ नदी से	२ नदियों से	ब० नदियों से
चतुर्थी	नद्यै	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
	१नदीकेलिये	२नदी के लिये	ब०न०केलिये
पञ्चमी	नद्याः	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
	१ नदी से	२ नदियों से	ब० नदियों से
षष्ठी	नद्याः	नद्योः	नदीनाम्
	१ नदी का	२ नदियों का	ब० नदियों का
सप्तमी	नद्याम्	नद्योः	नदीषु
	१ नदी में	२ नदियों में	ब० नदियों में
सम्बोधन	नदि	नद्यौ	नद्यः
	हे नदी	हे २ नदियो	हे ब० नदियो

ऊकारान्त " वधू " शब्द (स्त्रीलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वधू	वध्वौ	वध्वः
	१ बहू	२ बहू	ब० बहू
द्वितीया	वधूम्	वध्वौ	वधूः

	१ बहू को	२ बहुओं को	ब० बहुओं को
तृतीया	वध्वा	वधूभ्याम्	वधूभिः
	१ बहू से	२ बहुओं से	ब० बहुओं से
चतुर्थी	वध्वै	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
	१ बहू के लिये	२ बहुओं के लिये	ब० ब० के लिये
पञ्चमी	वध्वाः	वधूभ्याम्	वधूभ्य
	१ बहू से	२ बहूओं से	ब० बहुओं से
षष्ठी	वध्वाः	वध्वोः	वधूनाम्
	१ बहू का	२ बहुओं का	ब० बहुओं का
सप्तमी	वध्वाम्	वध्वोः	वधूषु
	१ बहू में	२ बहुओं में	ब० बहुओं में
सम्बोधन	वधु	वध्वौ	वध्वः
	हे बहू	हे २ बहुओ	हे ब० बहुओ

भाषा बनाओ ।

अम्बा गौर्याः गृहे व्रजति स्म । श्वश्रू अभ्यसत् सिंहेन । वधू काष्ठम् भुङ्क्ते । माता सुतान् त्रायति । वैश्याः अन्नम् मायन्ते । अम्बाः सुताणीम् सर्वदा कथयन्ति । गिरिभ्यो गंगामानयत् भगीरथः । नार्यः नद्याम् व्रजिष्यन्ति । कृष्णस्य पत्नी रामम् वन्दते ॥

संस्कृत बनाओ ।

नदी में जल है । गौरी सास के साथ गयी थी । माता ने बेटे को सजाया । राम की पत्नी सीता थी । हे मा ! प्रणाम करता हूं । हे बेटे ! तुम गौरी को

प्रणाम करते हो वा नहीं? स्त्रियां नदी को जावेंगी॥

८२—विधि (आज्ञा) निमन्त्रण (न्योता) आमन्त्रण (सम्मति) अधीष्ट (सत्कारपूर्वक चाहना) सम्प्रश्न (पूछना) प्रार्थना (मांगना) और आशीर्वाद देने के अर्थ में "लोट्" लकार होता है॥

८३—यदि लोट् लकार के परस्मैपदी रूप बनाने हों तो २१वें प्रक्रम से आये हुए "ति" और 'अन्ति' इन दो प्रत्ययों के इकार के स्थान में उकार होजाता है तथा लङ् लकार के समान तस्, थस्, थ और मिप् के स्थान में ताम्, तम्, त और अम् आदेश होते हैं और वः, मः के विसर्गों का लोप होजाता है एवम् 'सि' के स्थान में 'हि' आदेश होता है

८२—विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसम्प्रश्नप्रार्थनेषु लिङ् ३।३।१६१ एष्वर्थेषु लिङ् भवति॥ लोट् च ३।३।१६२ विध्याद्यर्थेषु धातोर्लोट् भवति॥ आशिषि लिङ्लोटौ ३।३।१७३ आशीर्विशिष्टेर्थे वर्तमानाद्धातोर्लिङ्लोटौ भवतः

८३—एरुः ३।४।८६ लोट् इकारस्य उः भवति॥ लोटो लङ्वत् ३।४।८५ लोटो लङ्वत् कार्यं भवति। तामादयः सलोपश्च॥ तस्थस्थमिपां तांतंतामः ३।४।१०१ ङित-श्चतुर्णां तामादयः क्रमाद्भवेयुः॥ नित्यं ङितः ३।४।९९ सकारान्तस्य ङिदुत्तमस्य नित्यं लोपः॥ सेर्ह्यपिच्च ३।४।८७ लोटः सेर्हिः सोपिच्च॥ अतोहेः ६।४।१०५ अतः परस्य हेर्लुक् भवति॥ मेर्निः ३।४।८९ लोटोमेर्निः भवति॥ आडुत्तमस्य पिच्च ३।४।९२ लोडुत्तमस्याट् पिच्च॥

परन्तु अकार के आगे इस 'हि' का लोप होजाता है तथा 'मि' के स्थान में 'नि' होता है और उत्तम-पुरुष के पूर्व " आ " का आगम् होता है ॥

८४–यदि चाहैं तो लोट् लकार के आशीर्वाद के अर्थ को प्रकाशित करने के लिये 'तु' और 'हि' इन दो प्रत्ययों के स्थानमें "तात्" भी कर सकते हैं॥

८५–लोट् लकार में आत्मनेपदी रूप बनाने के निमित्त जो २१वें प्रक्रम के प्रत्यय हों उन में से जो एकारान्त प्रत्यय हैं उन के एकार के स्थान में " आम् " होजाता है परन्तु 'से' और " ध्वे " के एकार के स्थान में क्रम से " व " और " अम् " आदेश होता है एवम् उत्तमपुरुष सम्बन्धी प्रत्ययों के एकार के स्थान में ऐकारादेश होजाता है ॥

परस्मैपदी " भू " धातु के रूप।

लोट् लकार

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमपुरुष	भवतु, भवतात्	भवताम्	भवन्तु
	वह होवे	वे दोनों होवें	वेसब होवें

८४-तुह्योस्तातङ्ङाशिष्यन्यतरस्याम् ७।१।३५ आशिषि तुह्योस्तातङ्वा भवति परत्वात्सर्वादेशः॥

८५-आमेतः ३।४।९० लोट्एकारस्याम् स्यात ॥ सवाभ्यां वामौ ३।४।९१ सवाभ्यां परस्य लोडेतः क्रमाद्वामौ भवतः॥ एत ऐ ३।४।९३ लोडुत्तमस्य एत ऐ भवतः॥

मध्यमपुरुष	भव, भवतात्	भवतम्	भवत
	तू होवे	तुमदोनोंहोओ	तुमसबहोओ
उत्तमपुरुष	भवानि	भवाव	भवाम
	मैं होऊं	हम दो होवें	हमसबहोवें

आत्मनेपदी " एध " धातु के रूप ।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमपुरुष	एधताम्	एधेताम्	एधन्ताम्
	वह बढ़े	वे दो बढ़ें	वे सब बढ़ें
मध्यमपुरुष	एधस्व	एधेथाम्	एधध्वम्
	तू बढ़	तुमदोनोंबढ़ो	तुमसब बढ़ो
उत्तमपुरुष	एधै	एधावहै	एधामहै
	मैं बढ़ूं	हम २ बढ़ें	हम सब बढ़ें

वाक्यों के उदाहरण ।

नृपः जयतु=राजा जीते । धनम् उपकारेण भवतु=धन उपकार के लिये होवे । शिवः सुतम् त्रायतु=ईश्वर पुत्र को बचावे । धर्मेण एधै=मैं धर्म से बढ़ूं । शिष्यः पत्रम् लिखतु=शिष्य पत्र लिखे ॥

सन्धिसूची।

कौमुद्यादि संस्कृत व्याकरण सम्बन्धी जितने छोटे बड़े ग्रन्थ हैं उन में से अधिकतर ग्रन्थों में सन्धिविभागादि प्रत्येक विषय पृथक् २ रूप से रक्खे गये हैं, परन्तु हम ने इस ग्रन्थ में ऐसा नहीं कियाहै,किन्तु जहांपर जिसकी आवश्यकता समझी है वहां पर वही लिखा गया है। इससे उन कौमुद्यादि ग्रन्थों की शैली से इस ग्रन्थ की शैली में बहुत कुछ भेद होगया है। अतः अब यहां पर उन ग्रन्थों के अनुसार भी इस ग्रन्थ की शैली को मिलाने के निमित्त तथा इस ग्रन्थ के अध्येताओं के सौकरार्थ यहां पर सन्धिसूची पृथक् दी जाती है। यद्यपि इस सूची में आये हुए सब उदाहरणों के सब नियम इस ग्रन्थमें यथास्थान आचुके हैं, परन्तु वहां उदाहरणों की न्यूनता है । अर्थात् वहां पर केवल एक वा दो ही (उस स्थल में जो आवश्यक समझा गया) उदाहरण दिये गये हैं । अतः वहां उक्त नियमों के अक्षर प्रत्यक्षर को स्पष्टीकरणार्थ अधिक उदाहरणों का समावेश नहीं होसका। इन्हीं दो हेतुओं से यहां पर सन्धिविभाग पृथक्रूप से दिया जाता है। यदि विद्यार्थिगण इस को ध्यान पूर्वक देखेंगे तो हमारा विश्वास है कि उन को स्वरसन्धि का ज्ञान अच्छा हो जायगा। एतदर्थ

उन को अन्य किसी विशेष ग्रन्थ के अध्ययन की आवश्यकता न पड़ेगी और उदाहरण भी सब ही ग्रन्थों से अधिक यहां पर अनायास सरलतया मिल जावेंगे। व्यञ्जन एवम् विसर्गसन्धि का समावेश द्वितीय भाग में होगा॥

पूर्ववर्ण	परवर्ण	पूर्वापरस्थानभूतवर्ण	असिद्धरूप	सिद्धरूप	नियम सूत्र प्रक्रमाङ्क सहित
अ	अ	आ	पुरुष + अर्थः	पुरुषार्थः	अकः सवर्णे दीर्घः (१०)
अ	आ	आ	वेद + आदिः	वेदादिः	
अ	इ	ए	कृष्ण + इच्छा	कृष्णेच्छा	आद्गुणः (३६)
अ	ई	ए	परम + ईश्वरः	परमेश्वरः	
अ	उ	ओ	जन्म + उत्सवः	जन्मोत्सवः	
अ	ऊ	ओ	समुद्र ÷ ऊर्मिः	समुद्रोर्मिः	
अ	ऋ	अर्	ब्रह्म + ऋषिः	ब्रह्मर्षिः	
अ	ए	ऐ	ब्रह्म + एकम्	ब्रह्मैकम्	वृद्धिरेचि (२६)
अ	ऐ	ऐ	परम + ऐश्वर्यम्	परमैश्वर्यम्	
अ	ओ	औ	गुड + ओदनः	गुडौदनः	
अ	औ	औ	तव + औदार्यम्	तवौदार्यम्	
आ	अ	आ	यथा + अर्थः	यथार्थः	अकः सवर्णे दीर्घः
आ	आ	आ	विद्या + आलयः	विद्यालयः	
आ	इ	ए	यथा ÷ इच्छसि	यथेच्छसि	आद्गुणः
आ	ई	ऐ	महा + ईशः	महेशः	
आ	उ	ओ	महा + उरस्कः	महोरस्कः	
आ	ऊ	ओ	गङ्गा + ऊर्मिः	गङ्गोर्मिः	
आ	ऋ	अर्	महा + ऋषिः	महर्षिः	
आ	ए	ऐ	समा + एका	समैका	वृद्धिरेचि
आ	ऐ	ऐ	विद्या + ऐहिकी	विद्यैहिकी	
आ	ओ	औ	महा + ओजः	महौजः	
आ	औ	औ	रसा + औचित्यम्	रसौचित्यम्	

इ	अ	य	सन्धि + अत्र	सन्ध्यत्र	इकोयणचि (४१)
इ	आ	या	अग्नि + आधानम्	अग्न्याधानम्	
इ	इ	ई	प्रति + इतिः	प्रतीतिः	अकः सवर्णे दीर्घः
इ	ई	ई	भूमि + ईशः	भूमीशः	
इ	उ	यु	भूमि + उद्धृता	भूम्युद्धृता	इको यणचि
इ	ऊ	यू	प्रति + ऊहः	प्रत्यूहः	
इ	ऋ	यृ	अति + ऋणम्	अत्यृणम्	
इ	ए	ये	प्रति + एकः	प्रत्येकः	
इ	ऐ	यै	अति ÷ ऐश्वर्यम्	अत्यैश्वर्यम्	
इ	ओ	यो	पचति + ओदनम्	पचत्योदनम्	
इ	औ	यौ	कृपि + औत्तकम्	कृप्यौत्तकम्	
ई	अ	य	नदी—अत्र	नद्यत्र	
ई	आ	या	नदी—आयाति	नद्यायाति	
ई	इ	ई	महती—इच्छा	महतीच्छा	अकः सवर्णे दीर्घः
ई	ई	ई	पृथ्वी—ईशः	पृथ्वीशः	
ई	उ	यु	सुधी—उपास्य	सुध्युपास्य	इको यणचि
ई	ऊ	यू	पृथ्वी—ऊपरा	पृथ्व्यूपरा	
ई	ऋ	यृ	कुमारी—ऋच्छति	कुमार्यृच्छति	
ई	ए	ये	वली—एतु	वल्येतु	
ई	ऐ	यै	सुधी—ऐश्वर्यम्	सुध्यैश्वर्यम्	
ई	ओ	यो	पत्नी—ओकः	पत्न्योकः	
ई	औ	यौ	कुमारी—औदार्यः	कुमार्यौदार्यः	
उ	अ	व	मधु—अमृतम्	मध्वमृतम्	
उ	आ	वा	गुरु—आदेशः	गुर्वादेशः	
उ	इ	वि	वधु—इन्दति	वध्विन्दति	
उ	ई	वी	साधु—ईहते	साध्वीहते	
उ	उ	ऊ	बहु—उन्नतः	बहून्नतः	अकः सवर्णे दीर्घः
उ	ऊ	ऊ	लघु—ऊर्मिः	लघूर्मिः	
उ	ऋ	वृ	वसु × ऋते	वस्वृते	इको यणचि
उ	ए	वे	वधु × एति	वध्वेति	
उ	ऐ	वै	वस्तु × ऐक्यम्	वस्त्वैक्यम्	
उ	ओ	वो	प्रभु × ओदनम्	प्रभ्वोदनम्	
उ	औ	वौ	सुष्ठु × औदनिकः	सुष्ठ्वौदनिकः	
ऊ	अ	व	वधू × अत्र	वध्वत्र	

ऊ	आ	वा	साधू × आसनम्	साध्वासनम्	
ऊ	इ	वि	वधू × इष्टिः	वध्विष्टिः	
ऊ	ई	वी	त्रपु × ईक्षणम्	त्रप्वीक्षणम्	
ऊ	उ	ऊ	स्वयंभू × उत्सवः	स्वयम्भूत्सवः	अकः सवर्णेदीर्घः
ऊ	ऊ	ऊ	भानू × ऊहा	भानूहा	
ऊ	ऋ	वृ	वधू × ऋतुः	वध्वृतुः	इको यणचि
ऊ	ए	वे	वधू × एतु	वध्वेतु	
ऊ	ऐ	वै	वधू × ऐक्यम्	वध्वैक्यम्	
ऊ	ओ	वो	तनू × ओजः	तन्वोजः	
ऊ	औ	वौ	वधू × औरसः	वध्वौरसः	
ऋ	अ	र	मातृ × अनुमतिः	मात्रनुमतिः	
ऋ	आ	रा	पितृ × आज्ञा	पित्राज्ञा	
ऋ	इ	रि	मातृ × इच्छा	मात्रिच्छा	
ऋ	ई	री	यातृ × ईरितः	यात्रीरितः	
ऋ	उ	रु	भ्रातृ × उपदेशः	भ्रात्रुपदेशः	
ऋ	ऊ	रू	स्वसृ × ऊरीकृत	स्वस्रूरीकृतम्	
ऋ	ऋ	ॠ	यातृ × ऋजीपम्	यातॄजीपम्	अकः सवर्णेदीर्घः
ऋ	ए	रे	होतृ × एकत्वम्	होत्रेकत्वम्	इको यणचि
ऋ	ऐ	रै	पितृ × ऐश्वर्यम्	पित्रैश्वर्यम्	
ऋ	ओ	रो	उद्गातृ—ओकः	उद्गात्रोकः	
ऋ	औ	रौ	क्षतृ—औरस्यः	क्षत्रौरस्यः	
ए	अ	अय	जे—अति	जयति	एचो यवायावः (२५)
ए	आ	अया	ते—आगता	तयागता	
ए	इ	अयि	के—इह	कयिह	
ए	ई	अयी	के—ईशितारः	कयीशितारः	
ए	उ	अयु	ते—उद्गता	तयुद्गता	
ए	ऊ	अयू	इमे—ऊहिता	इमयूहिता	
ए	ऋ	अयृ	वने—ऋषयः	वनयृषयः	
ए	ए	अये	पुण्ये-एधांसि	पुण्ययेधांसि	
ए	ऐ	अयै	पण्ये-ऐलेयम्	पण्ययैलयम्	
ए	ओ	अयो	नगरे-ओकांसि	नगरयोकांसि	
ए	औ	अयौ	शास्त्रे-औषधिः	शास्त्रयौषधिः	
ऐ	अ	आय	पत्न्यै-अकः	पत्न्यायकः	
ऐ	आ	आया	लक्ष्म्यै-आज्ञा	लक्ष्म्यायाज्ञा	

ऐ	इ	आयि	लक्ष्म्यै–इच्छा	लक्ष्म्यायिच्छा
ऐ	ई	आयी	श्रियै–ईहा	श्रियायीहा
ऐ	उ	आयु	श्रियै–उद्योग:	श्रियायुद्योग:
ऐ	ऊ	आयू	भूत्यै–ऊरीकृतम्	भूत्यायूरीकृतम्
ऐ	ऋ	आयृ	इष्ट्यै–ऋत्विक्=इष्ट्यायृत्विक्	
ऐ	ए	आये	रै–ए	राये
ऐ	ऐ	आयै	कस्मै–ऐश्वर्यम्	कस्मायैश्वर्यम्
ऐ	ओ	आयो	रै–ओ:	रायो:
ऐ	औ	आयौ	रै–औ	रायौ
ओ	अ	अव	भो–अति	भवति
ओ	आ	अवा	गुरो–आज्ञा	गुरवाज्ञा
ओ	इ	अवि	पो–इत्र	पवित्र
ओ	ई	अवी	भानो ईहा	भानवीहा
ओ	उ	अवु	वटो–उत्तिष्ठ	वटवुत्तिष्ठ
ओ	ऊ	अवू	वायो–ऊना:	वायवूना:
ओ	ऋ	अवृ	वटो–ऋक्ष:	वटवृक्ष:
ओ	ए	अवे	गुरो–ए	गुरवे
ओ	ऐ	अवै	प्रभो–ऐश्वर्यम्	प्रभवैश्वर्यम्
ओ	ओ	अवो	गो–ओ:	गवो:
ओ	औ	अवौ	प्रभो-औदार्यम्	प्रभवौदार्यम्
औ	अ	आव	पौ–अक:	पावक:
औ	आ	आवा	विष्णौ–आग्रह:	विष्णावाग्रह:
औ	इ	आवि	सख्यौ–इच्छा	सख्याविच्छा
औ	ई	आवी	मित्रौ–ईर्ष्या	मित्रावीर्ष्या
औ	उ	आवु	द्वौ–उपमितौ	द्वावुपमितौ
औ	ऊ	आवू	भूमौ–ऊष:	भूमावूष:
औ	ऋ	आवृ	आजौ–ऋषि:	आजावृषि:
औ	ए	आवे	नौ–ए	नावे
औ	ऐ	आवै	गुरौ–ऐश्वर्यम्	गुरावैश्वर्यम्
औ	ओ	आवो	नौ–ओ:	नावो:
औ	औ	आवौ	नौ–औ	नावौ

आवश्यक शब्दों के अंग्रेज़ी पर्यायवाचक

अकर्मकक्रिया—Intransitive Verb. अधिकरण—Locative.
अनुनासिक–Nasal. अपादान–Ablative.
अप्रधान वा गौणकर्म—Secondary or Indirect Accusative.
अव्यय–Indeclinable. अव्ययीभाव समास–Indeclinable Compound.
आशीर्लिङ्–Benedictive Mood. उपसर्ग—Prefix.
एकवचन–Singular Number. ओष्ठ्य–Labial.
कारक–Case. कण्ठ्यतालव्य—Palato-guttural.
कण्ठ्यौष्ठ्य—Labio-guttural. कण्ठ्य—Guttural.
कर्त्ता—Nominative. कर्त्तृवाच्य–Active Voice.
कर्म–Accusative. करण–Instrumental.
कर्मवाच्य—Passive Voice. कर्मधारय–Appositional Compound.
क्रिया–Verb. गण–Conjugation or Class.
चतुर्थी—Fourth class. जिह्वामूलीय—Linguae-radical.
तत्पुरुष समास–Determinative Compound.
तालव्य–Palatal. तृतीया –Third class.
दन्त्य–Dental. दन्त्यौष्ठ्य—Dento-labial.
दीर्घस्वर–Long Vowel. द्विगुसमास–Numeral Compound.
द्वितीया–Second class. द्वन्द्व समास–Copulative "
द्विवचन–Dual Number. धातु–Root of a verb,
नपुंसकलिङ्ग–Neuter Gender. पञ्चमी–Fifth class.
प्रकृति–Root. प्रथमा–First class.
पुल्लिङ्ग—Masculine Gender. प्रत्यय—Affix.
प्रधान वा मुख्यकर्म—Primary or Direct Accusative.
बहुवचन–Plural Number.
भाववाच्य–Intransitive Passive Voice.
मूर्धन्य–Cerebral. मूलशब्द (संज्ञा)–Base.
लङ्–अनद्यतनभूत, First Preterite or Imperfect Tense.
लट्—वर्त्तमान लकार, Present Tense.
लिङ्ग–Gender.
लिट्–परोक्षभूत, Second Preterite or Perfect Tense.
लुङ्–सामान्यभूत, Third Preterite.

लुट्—अनद्यतनभविष्य, First or Definite Future.
लृङ्—क्रियातिपत्ति, Conditional Mood.
लृट्—सामान्यभविष्य, Second or Indefinite Future.
लोट्—आज्ञा, Imperative Mood.
वचन—Number.
बहुव्रीहि—Relative Compound.
विधिलिङ्—विधि, Potential Mood,
विशेषण—Adjective.
षष्ठी—Sixth class.
सन्धि—Conjunction.
समास—Compound.
सम्प्रदान—Dative.
सम्बोधन—Vocative.
सर्वनाम—Pronoun.
स्वर—Vowel.
वर्ण—Letter.
वर्ग—Class.
व्यञ्जन—Consonant.
सकर्मकक्रिया—Transitive Verb.
सप्तमी—Seventh class.
सम्बन्ध—Genitive.
स्त्रीलिङ्ग—Feminine Gender.
ह्रस्व स्वर—Short Vowel.